ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार,14 जुलाई 2013 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 14 जुलाई, 2013 से 20 जुलाई 2013

आ. शु–06 ● वि० सं०–2070 ● वर्ष 78, अंक 64, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 190 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,114 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति ने उत्तराखण्ड आपदा पीड़ितों के लिए दिये 2 करोड़ 51 लाख रुपये

श्री पूनम सूरी, प्रधान, डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति, के नेतृत्व में समिति की ओर से एक शिष्टमंडल उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री श्री विजय बहुगुणा से मिला और उत्तराखण्ड के आपदा पीड़ितों के लिए 2 करोड़ 51 लाख रुपये का एक चैक मुख्यमंत्री को भेंट किया।

राज्य में उत्पन्न हुई स्थिति पर बातचीत के दौरान प्रधानजी ने डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति की ओर से मुख्यमंत्री को आश्वासन दिया कि समिति इस आपदा में अनाथ हुए बच्चों की शिक्षा का प्रबंध करने के लिए तैयार है और यदि अनाथों को शरण देने की बात हो तो इसके लिए एक अनाथालय की स्थापना भी की जा सकती है। श्री सूरी ने एक गाँव, जहाँ केवल विधवाएं ही रह गयी हैं, के लिये समिति की ओर से व्यावसायिक प्रशिक्षण और किसी अन्य तरह की सहायता की पेशकश की। मुख्यमंत्री ने इन मुद्दों पर सही आँकड़े उपलब्ध हो जाने पर समिति को सूचित करने का आश्वासन दिया। मुख्यमंत्री ने प्रबंधकर्त्री समिति द्वारा की गई सहायता के लिए प्रधानजी का धन्यवाद किया।

इस शिष्टमंडल में प्रबंधकर्त्री समिति के निर्वाचित पदाधिकारियों –श्री आर.एस.शर्मा (महासचिव), श्री श्रीदीप ओमचारी (उप–प्रधान), श्री रवीन्द्र कुमार (सचिव), श्री रवीन्द्र तलवार (सचिव) श्री महेश चोपड़ा (कोषाध्यक्ष) के अतिरिक्त प्रबंधकर्त्री समिति के निदेशक ब्रिगेडियर ए.के अदलखा श्रीमती जुनेश काकड़िया, श्री जे.पी.शूर, श्री कृष्णसिंह आर्य, तथा श्री वी.सिंह क्षेत्रीय निदेशक उपस्थित थे।

प्रधानजी ने मुख्यमंत्री को डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति की गतिविधियों से अवगत कराया और चारों वेदों का अंग्रेजी भाष्य तथा समिति से संबंधित साहित्य भी भेंट किया।

डी.ए.वी. रांची में लगा वैदिक चेतना शिविर

नीरजा सहाय डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गौशाला मार्ग, काँके, रांची (झारखण्ड) में चलो! लौट चलें वेदों की ओर' इस आदर्श वाक्य को समाज और जीवन में मूर्त रूप देने के लिए संकल्प दिवस मनाया गया, साथ ही डी.ए.वी. रांची क्षेत्र के 2000 बच्चों ने वैदिक चेतना और जीवन कौशल शिविर में शिक्षक–शिक्षिकाओं के साथ भाग लिया।

इस अवसर परडी.ए.वी. रांची के सभी स्कूलों के प्राचार्य, स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति के चेयरमैन श्री ए.के. सहाय, नीरजा सहाय डी.ए.वी. सहित स्वामी धर्मानंद सरस्वती, स्वामी व्रतानंद जी स्वामी धर्मबंधु जी, ब्रह्मचारी आचार्य आर्य नरेश जी, माननीय इन्दर सिंह नामधारी जी, सदस्य एवं पीठाधीश आदि विद्वान् उपस्थित थे। शिविर में मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद माननीय प्रिंसिपल मोहनलाल जी, उप–प्रधान एवं श्री विजय सभरवाल, सजिव, डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति, नई दिल्ली ने दिया।

हवन यज्ञ के बाद गणमान्य अतिथियों ने दीप प्रज्जवलित करके कार्यक्रम को प्रारम्भ किया। स्कूल के बच्चों ने स्वागत गान प्रस्तुत किया और श्री एल.आर सैनी ने अपने संबोधन में कहा, डी.ए.वी. संस्थाएं वैदिक विचारधारा से ओत–प्रोत शिक्षा देने के लिए प्रयासरत हैं, और हमारे माननीय प्रधान श्री पूनम सूरी जी की इच्छा है कि हमारे प्राचार्य, अध्यापक एवं विद्यार्थी वैदिक विचारधारा से ओत–प्रोत हों।

नीरजा सहाय डी.ए.वी. के बच्चों द्वारा महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

नामक नाटिका एवं डी.ए.वी. संस्थान द्वारा दूर–दराज से इलाकों में किए जा रहे कार्यों को प्रस्तुत किया, जिसकी सभी ने करतल ध्वनि से प्रशंसा की।

प्रिंसिपल मोहनलाल जी, उप–प्रधान, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति ने विभिन्न विद्यालयों से आए स्थानीय कमेटी के अध्यक्षों एवं संन्यासी वृन्द को अपने आशीर्वाद में कहा कि डी.ए.वी. जिस आधुनिक शिक्षा और चरित्र शिक्षा की वकालत लंबे समय से कर रहा है, अब सरकार उसी वकालत कर रही है। जब तक बच्चों को अपनी सभ्यता, संस्कृति से अवगत नहीं कराएंगे; तब तक यह शिक्षा पेशेवर जानवर के समान आचरण करना सिखाएगी।

लगभग 2000 बच्चों के वैदिक चेतना शिविर पर मुख्य अतिथि माननीय श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद सिंह, अध्यक्ष, विधान सभा, झारखण्ड थे। यज्ञ और मुख्य अतिथि द्वारा ओ३म् ध्वजारोहन के बाद डी.ए.वी. कडरु के बच्चों ने वेद मंत्र पर आधारित स्वागत नृत्य प्रस्तुत किया। शिविर में स्वामी धर्मबंधुजी तथा आचार्य आर्य नरेशजी ने संबोधित किया। विद्या और मुख्य अतिथि श्री सी.पी. सिंह ने डी.ए.वी. के कार्यों की प्रशंसा करते हुए अपने भाषण में बच्चों को नैतिककता को अपनाने पर बल देने के लिए कहा। स्वामी धर्मानन्दजी ने अपने आशीर्वचन में वैदिक संस्कारों, विचारों को अपनाने पर बल दिया। शिविर के दौरान सैनिक बाजार से राज्यपाल भवन तक शौभा–यात्रा निकाली गयी जिसे ओ३म् ध्वज दिखाकर माननीय श्री सी.पी. सिंह जी ने प्रारम्भ किया।

समापन समारोह पर, विशिष्ट अतिथि श्री विजय सभरवाल जी, सचिव, डी.ए.वी. सी.एम.सी., श्रीमती शशि सभरवाल, नई दिल्ली थे। श्री विजय सभरवाल जी ने प्राचार्यों, शिक्षकों एवं बच्चों को संबोधित करते हुए कहा कि डी.ए.वी. का काम केवल भौतिक शिक्षा देना नहीं है– भारतीय सभ्यता–संस्कृति–संस्कृत–सामाजिक सेवा–राष्ट्रप्रेम आदि बच्चों में आए, ऐसा उपाय करना हमारा मुख्य धर्म एवं उद्देश्य है।

निदेशक, श्री एल.आर.सैनी ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया औरस्कूल के चेयरमैन, मैनेजर, प्राचार्या, अध्यापक एवं बच्चों को शिविर की सफलता पर बधाई दी।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 14 जुलाई, 2013 से 20 जुलाई, 2013

अतिथि यज्ञ

● **डॉ. रामनाथ वेदालंकार**

त्वमग्ने प्रयतदक्षिणं नरं, वर्मेव स्यूतं परिपासि विश्वतः।
स्वादुक्षद्मा यो वसतौ स्योनकृज्, जीवयाजं यजते सोपमा दिवः।।

ऋग 1.31.15

ऋषिः **हिरण्यस्तूपः आङ्गिरसः**। देवता **अग्निः**। छन्दः **विराड् जगती**।

● (**अग्ने**) हे तेजस्वी परमेश्वर! (**त्वं**) तू (**प्रयतदक्षिणं**) पवित्र दक्षिणा देनेवाले (**नरं**) मनुष्य को (**स्यूतं**) सिले हुए (**वर्म इव**) कवच के समान (**विश्वतः**) सब ओर से (**परिपासि**) परिरक्षित करता है। (**स्वादु–क्षद्मा**) स्वादु भक्ष्य और पेय वाला (**स्योन–कृत्**) [अतिथियों को] सुख देनेवाला (**यः**) जो (**वसतौ**) घर में (**जीवयाजं यजते**) अतिथि–यज्ञ करता है, (**सः**) वह (**दिवः उपमा**) द्यु–लोक के समान [हो जाता है]।

जब हमें शत्रु के आयुधों से अपने शरीर की रक्षा करनी अभिप्रेत होती है, तब हम सिला हुआ अभेद्य कवच शरीर पर धारण कर लेते हैं। उस कवच से टकराकर वैरी के बाण, भाले आदि शस्त्रास्त्र कुंठित हो जाते हैं। यहाँ वेद मनुष्य को एक अन्य कवच धारण करने की प्रेरणा कर रहा है, वह है दक्षिण का कवच। हे अग्ने! हे तेजःस्वरूप परमात्मन्! तुम दक्षिणा देनेवाले नर की वैसे ही सब ओर से रक्षा करते हो जैसे कवच रक्षा करता है। पर कवच यदि ठीक प्रकार सिला हुआ तथा सुदृढ़ न हो, तो वह धारण–कर्ता की रक्षा करने के स्थान पर स्वयं शत्रु के प्रहार से क्षत–विक्षत हो सकता हैं इसी प्रकार दक्षिणा भी यदि पवित्र न हो तो वह दाता की रक्षा का साधन नहीं बनती। दक्षिणा में जो भोजन, वस्त्र, धन आदि दिया जा रहा है, वह शुभ साधनों से अर्जित हो तथा प्रसन्नतापूर्वक कर्त्तव्य मानकर दिया जा रहा हो, ऐसी पवित्र दक्षिणा ही चारों ओर के विघ्नों से दाता की रक्षा करती है।

गृहागत अतिथि का सत्कार करना भी वैदिक मार्यादा के अनुसार गृहस्थ का एक आवश्यक कर्तव्य है। अतएव नैत्यिक पंच–यज्ञों में अतिथि–यज्ञ भी परिगणित किया गया है। जो अतिथि के घर आने पर स्वादु भोज्य, पेय आदि से सत्कृत कर उसे सुख देता है और जीवन–पर्यन्त अतिथि–यज्ञ करता रहता है, वह द्यु–लोक के समान उन्नत और प्रकाशमान हो जाता है। श्रुति कहती है कि विद्वान् व्रतनिष्ठ अतिथि जिसके घर आये, वह स्वयं उसकी सेवा में उपस्थित होकर कुशल–क्षेम एवं उसकी आवश्यकताओं के विषय में पूछे। यहाँ तक कि यदि वह अग्निहोत्र करने के लिए तैयार हो और उस समय अतिथि आ जाए, तो वह अग्निहोत्र छोड़कर पहले अतिथि की सेवा में पहुँचे और उसकी स्वीकृति लेकर ही अग्निहोत्र के लिए बैठे।

हे सब यज्ञों के आदर्श अग्नि–स्वरूप परमेश्वर! तुम हमें भी दक्षिणा और अतिथि–यज्ञ के लिए सदैव प्रेरित करते रहो, जिससे हम भी एक दिन द्युलोक के सदृश उच्च, उदार, विशाल, प्रकाशमान और प्रकाशक होने के गौरव को प्राप्त कर सकें।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

घोर घने जंगल में

● महात्मा आनन्द स्वामी

मानवता का मार्ग बताते हुए स्वामी जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में ऋषि दयानन्द द्वारा लिखित मनुष्य की परिभाषा का उल्लेख किया। पुनः हृदय की निर्मलता की बात करते हुए कहा 'हृदय को निर्मल और पवित्र बनाने का तीसरा साधन यह है' मनुष्य बन, मनुष्य बन! लाला मुल्क राज की कविता यह शेर पढ़ा–

भरी मरदमों से गो यह सरजमीं है।
वले देखने को भी इन्सां नहीं है।।

मनुष्यों से भरी इस पृथिवी पर मनुष्य हैं कहाँ? मनुष्य तो वह है जो दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझता है। जब ऐसा होता है तो मन में पवित्रता आती है।, हृदय में एक ज्योति जगती है। हृदय वही, जहाँ उस प्रीतम प्यारे के दर्शन होते हैं। और दर्शन पाकर इस आत्मा की सारी इच्छायें पूर्ण हो जाती है, थोड़ी देर अथवा सीमित समय के लिये नहीं अपितु अनन्त समय के लिये।

उस परम पिता के दर्शन होने पर हृदय की गाठें खुल जाती हैं, सन्देह समाप्त हो जाते हैं।

अब आगे.....

इसलिए मैं कहता हूँ मेरे भाई, इस हृदय में मैल मत आने दो। इसको शुद्ध बना लो, इसको पवित्र बना दो, फिर देखो कि मन्दिर के द्वार कैसे खुलते हैं और उस प्रभु प्यारे प्रीतम के दर्शन कैसे होते हैं।

परन्तु जैसा मैंने कहा, मन के भीतर रहने का यह अर्थ नहीं कि मन के बाहर वह महाशक्ति, वह अपार आनन्द का सागर विद्यमान नहीं। निश्चित रूप से वह विद्यमान है। उसका चित्र तो ब्रह्माण्ड के कण–कण में है। आनन्द और उल्लास की हिलोरें लेती हुई उसकी मुस्कराहट स्थान–स्थान पर जगमगाती है। सुख की छाया पाने के लिए, दुःख में सहानुभूति अनुभव करने के लिए हम तड़प उठते हैं, बेचैन हो जाते हैं कि वह कहीं दृष्टिगोचर हो जाये। हम उसे बादलों और फूलों में, लहरों और प्रपातों में ढूँढ़ते हैं। जानते हैं कि वह है इस अनन्त माया के पीछे खड़ा हुआ। संसार के सौन्दर्य को पर्दा बनाकर इसकी चिलमन के पीछे छिपा हुआ कोई है जो इस विशाल विश्व को चलाता है। ऐसा अनुभव होता है कि हमसे ओट में रहकर, आँखों से ओझल रहकर भी कोई हमारा है जो हमारे जीवनों का जीवन है, हमारे प्राणों का प्राण। ऐसा अनुभव होता है कि जो दृष्टिगोचर होते हैं वे अपने नहीं; जो दिखाई नहीं देता वही अपना है–

जो हैं आते नज़र, नहीं अपने।
जो है अपना, नज़र नहीं आता।।
ज़ेरे–साया हूँ उसकी ए प्यारे !
जिसका साया नज़र नहीं आता।।

उसको ढूँढ़ते हैं हम जो छिपा बैठा है, खोजते हैं और पाते नहीं, जानते हैं वह विद्यमान है परन्तु कहाँ है? कैसा है? किधर है? यह ज्ञात नहीं होता है। परन्तु यह साधारण खोज, साधारण प्यार तो नहीं; यह वह पागलपन है जो किसी भाग्यशाली को मिलता है और यदि वास्तव में मिल जाए तो बेड़ा पार कर देता है। पंजाब के सूफ़ी कवि साईं बुल्लेशाह हुए हैं; वे कहा करते थे–

पा गल असली, पागल हो जा।

दो अर्थ हैं इसके। एक यह कि गले में असली डाल–माला डाल ले–प्रभु का नाम स्मरण करता जा लगातार। उसके नाम–स्मरण में पागल हो जा। दूसरा यह कि पागल होना चाहता है भाई, तो हो जा पागल। परन्तु देख, यह मनुष्य का जन्म बहुत कठिनाई से मिलता है। सांसारिक सौन्दर्य, सांसारिक वैभव और ऐश्वर्य, धन और सम्पत्ति, शासन और शक्ति के लिए पागल न हो जा। इसके लिए पागल होकर अपना विनाश न कर ले। ये सब यहीं रह जाने वाले हैं। जहाँगीर के साथ नूरजहाँ नहीं गई। सिकन्दर के साथ शासन नहीं गया। महाराज रणजीतसिंह के साथ कोहेनूर नहीं गया। शाहजहाँ के साथ दिल्ली का लालकिला नहीं गया तो तेरे साथ क्या जाएगा? यह नकली पागलपन है, इसके पीछे न दौड़ । पागल ही बनना है तो असली बन।

और यह असली पागलपन जब किसी को मिल जाता है, जब प्रियतम प्रभु का

प्यार उसके हृदय में जाग उठता है तो महर्षि दयानन्द की भाँति उसके लिए घरबार का कोई मूल्य नहीं रहता, ध्रुव की भाँति रा. जपाट का कोई मूल्य नहीं रहता, प्रह्लाद की भाँति कोई भय नहीं रहता। तब वह सूरदास की भाँति अपनी बाहर की आँखों को अन्धा करके वनों और जंगलों में अपने मनमोहन को खोजता फिरता है। उस समय उसकी ऐसी अवस्था होती है जिसके सम्बन्ध में किसी कवि ने कहा है–

हम वहाँ हैं जहाँ से हमको भी, कुछ हमारी खबर नहीं आंती।

तब भी वह किसी भी बात से डरता नहीं, किसी भी स्थान पर पराजित नहीं होता। उस समय वह गर्व से कहता है–

मेरी शिकस्ते–दिल कोई मेरी शिकस्ते–दिल नहीं।

मुस्तकिल एक ख़रोश है सीनाए–रोज़गार में।।

ला दिया हमें तो क्या, लूट लिया चमन तो क्या?

हम भी तुम्हें दिखायेंगे जी के इसी बहार में।।

कष्ट उस समय कष्ट प्रतीत नहीं होते, कोई रुकावट भी रुकावट नहीं लगती और भक्त प्रभु के प्यार में मस्त होकर कहता है–

गो मैं हूँ तुझसे दूर, तेरी आरजू तो है।

तेरा पता मिले न मिले, जुस्तजू तो है।।

कहाँ तक छिपेगा तू? कब तक दूर रहेगा ओ मनमोहन? ओ मेरे जन्म–जन्म के साथी! ओ मेरे रूठे हुए प्रीतम! कब तक तू आँखों से ओझल रहेगा? तेरे पाने की इच्छा मेरे हृदय में है, तेरा प्यार मेरे हृदय में है, फिर तू ओझल होकर जायेगा कहाँ?

बाँह छुड़ाये जात हो, निबल जानके मोहे।

हिरदय से जब जाओगे, सबल कहूँगा तोहे।।

परम भक्त सूरदास हृदय में प्रभुदर्शन की प्यास लिये चले जाते थे उजाड़ वन में। आँखें थीं नहीं। संगी–साथी पास नहीं; अपनी लकड़ी टेकते, भूमि को टटोलते हुए आगे बढ़ रहे थे। कहीं पत्थर आ गया तो ठोकर लग गई। कहीं काँटा आ गया तो चुभ गया। कहीं गड्ढा आया तो गिर पड़े। अन्धी आँखों में आँसू भरकर बोले–

नैनहीन को राह दिखा दो प्रभु–

नैनहीन को राह दिखा दो,

सबको राह दिखाने वाले!

अपना करुणा–रूप दिखा दो,

करुणारूप कहाने वाले!

इस प्रकार वे रोए तो भक्तिरस के प्रेमियों ने यह गाथा बना ली कि एक छोटा–सा बालक उनके पास आया, उनका हाथ पकड़ मीठी वाणी में बोला, "आओ बाबा, मैं तुम्हें ठीक मार्ग से पहुँचा दूँ।" सूरदास को ऐसा प्रतीत हुआ कि इस वाणी में अमृत है। उस बालक के कोमल हाथ छूने से उसके शरीर में बिजली–सी कौंध गई। तभी ऐसा प्रतीत हुआ कि इस उजाड़ वन में उसक हाथ थामनेवाला वही बाल गोपाल है जिसे वे ढूँढते फिरते थे। ऐसा विचार आया ही था कि वह बालक उनक हाथ छोड़कर चला गया। सूरदास ने प्रयत्न किया कि उसे जाने न दें, परन्तु ऐसा कर नहीं सके। तभी प्यार के अभिमान से उन्होंने कहा– **बाँह छुड़ाये जाते हो...?**

अरे ओ मनमोहन! मैं दुर्बल हूँ, तुम मेरा हाथ छुड़ाकर चले गये; परन्तु वीरता तो तब है जब मेरे हृदय से जाकर देखो। मेरे हृदय में तू है। तेरे अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं, फिर तू जायेगा कहाँ? आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों, नहीं तो अगले जन्म में अथवा उससे अगले जन्म में, मैं तुझे पाऊँगा अवश्य। और जब तक तू नहीं मिलता–

दिल के आईने में है तस्वीरे–यार।

जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली।।

तू जायेगा कहाँ? एक–न–एक दिन तेरा हृदय पसीजेगा अवश्य। एक–न–एक दिन तेरी करुणा के सागर में ज्वार–भाटा आयेगा अवश्य।

और सुनो! परमेश्वर पत्थर नहीं है। प्यार का उत्तर अवश्य देता है। वह पार्वती थी न? पिता उसके लिए वर खोज रहे थे। तभी नारद ने कहा– "देवी! तेरे लिए तो एक ही वर है। वह भोलानाथ शिव शम्भू। उसके अतिरिक्त तेरा कोई पति नहीं। परन्तु उसे मनाना सरल नहीं। वह समाधि में बैठा है। उसकी समाधि कभी टूटती नहीं।"

पार्वती ने पूछा, "आप कैसे कहते हैं कि उनके अतिरिक्त मेरा कोई पति नहीं?"

नारद बोले, "जन्म–जन्म से, आदि काल से, वही तेरा पति है, वह अजर और अमर है। तू ही बार–बार नये रूप से, नये तन से उसे प्राप्त करती है, परन्तु इस बार उसे प्राप्त करना सरल नहीं। पिछले जन्म में तू सती थी। पति के अपमान को सहन न करके तूने अपने प्राण त्याग दिये तभी से वह शिवशंकर गहरी समाधि में बैठा है।"

पार्वती ने कहा, "तब मैं उसे प्राप्त करूँगी अवश्य। यदि सहस्र जन्म भी यत्न करना पड़े तो मैं करूँगी।"

और तब उसने घोर तप आरम्भ किया जिससे बड़ा तप आजतक शायद हुआ नहीं। 'शिव' के अतिरिक्त दूसरा नाम लेना उसने छोड़ दिया। उससे काम नहीं बना तो उसने व्रत रखना आरम्भ किया। उससे भी काम नहीं बना तो हिमालय की बर्फ़ीनी चोटी पर आसन लगाकर बैठ गई। घर के लोग उसे दिन में एक बार भोजन पहुँचा देते थे। उसे खाकर वह अपने स्वामी का नाम–स्मरण करती रहती। इससे भी काम नहीं बना तो उसने खाना छोड़ दिया, केवल पानी पी लेती और बैठी रहती, प्रभु का नाम लेती रहती। इससे भी काम नहीं बना तो उसने पानी भी पीना छोड़ दिया; दिन–भर में घास के एक–दो पत्ते खा लेती और फिर वह होती और उसके प्रभु का नाम। इससे भी काम नहीं बना तो उसने पत्ते खाना भी छोड़ दिया। तब उसका नाम 'अपर्णा' हुआ अर्थात् जिसने 'पर्ण' (पत्ते) भी छोड़ दिये हैं। बर्फ़ के तूफ़ान उठे, बादल गर्जे, तेज बर्फ़ीली आँधियाँ चलीं, बिजलियाँ कड़कीं, परन्तु देवी अपर्णा अपने व्रत से नहीं टली। उसके इस घोर तप को देखकर महादेव का दिल पसीजा, उनकी समाधि टूटी। वे स्वयं उसके पास आये; बोले, "देवि! मैं आ गया हूँ।"

यह सारी कहानी वास्तव में आत्मा और परमात्मा के प्यार का अलंकार है। इसका भाव यह है कि आत्मा में जब उस परम प्यारे प्रीतम का प्यार जागता है तो वह परमेश्वर छिपा नहीं रहता, प्रकट होता है। वह आत्मा के सामने आकर कहता है, "देवि! मैं आ गया हूँ।"

अरे, वह प्रभु पत्थरदिल नहीं है, वह तो करुणा का अपार सागर है। वह तो भक्तवत्सल है, भक्त की पुकार सुनता है, उसके प्यार को देखता है, उसका उत्तर भी देता है। इसीलिए ऋषि ने कहा, "क्यों भटक रहा तू?" अभी–अभी मेरे महेश जी ने गाया–'तेरे घर का द्वार न पाया।' बहुत सुन्दर गीत था। बहुत प्यार से महेश जी ने गाया। परन्तु ऋषि कहता है– 'अरे ओ मानव! भटकता न फिर। उसके घर का द्वार मिल जायेगा। आ, मैं तुझे बताऊँ कि वह द्वार कौन–सा है?"

बृहदारण्यक उपनिषद् के पाँचवें अध्याय के चौथे ब्राह्मण में ऋषि कहता है कि उस सत्यस्वरूप मनमोहन प्रीतम का निवास तेरे दिल में है, वहाँ ढूँढ़ उसे वहाँ पहुँचकर देख कि तेरा प्रीतम तेरी प्रतीक्षा में बैठा है।

मेरे कानों में आहिस्ता कहा

पीरे–तरीक़त ज्ञानी ने।

जिन्हें तू ढूँढ़ता है वो तो तेरे दिल में रहते हैं।।

अरे, कहाँ ढूँढ़ता फिरता है उसको? यहाँ आकर देख–

मोती जैसे सीप में, बास बसे मृग माहीं।

तेरा प्रीतम तुझमें बसे, बाहर ढूँढ़ो नाहीं।।

मोती जैसे सीप में, खुशबू जैसे फूल।

तेरा प्रीतम तुझमें बसे, तू ही गया है भूल।।

नहीं, भूल नहीं मेरे भाई! इस हृदय में झाँककर देख। यहाँ झुका दे अपने सिर को–

करूँ क्योंकर मैं सिजदा सिर झुकाकर अपने सीने को।

कि सीने में मेरा दिल है, वो मेरे दिल में रहते हैं।।

यहाँ रहता है वह। इस हृदय में उसे ढूँढ़ो–

न मस्जिद से ग़रज मुझको, न मन्दिर से मुझे मतलब।

मुझे तो मन की मस्जिद में खुदा मालूम होता है।।

यहाँ है तेरा प्यारा, तेरा मनमोहन, तेरा जन्म–जन्म का साथी। उसके प्यार का भिखारी बन! व्याकुल होता है तो उसके लिए हो। पागल बनता है तो उसके लिए बन और आँखों में आँसू भरकर व्याकुल होकर पुकार, "अरे ओ आनन्द के सिन्धु! अरे ओ परम सुन्दर! ओ परम मधुर! ओ मरे जन्म–जन्म के साथी! ओ मेरे प्राणसखा! आओ, दर्शन दे दो। देखो, मैं प्यार की भीख माँगने के लिए तुम्हारे दर पर आया हूँ, कृपा कर दो अब–

पलकों की झोली किये, प्यारभरे दो नैन।

माँगें दास मधूकरी, छके रहें दिन रैन।।

और कुछ चाहिए नहीं बाबा, और कोई भूख–प्यास नहीं। तुम्हारा दर्शन ही वह मधुकरी है जिसके लिए ये आँखें पलकों की झोली फैलाए खड़ी राह देख रही हैं।

और संसार में कहीं भी देखो, सब लोग उसी को तो खोजते–फिरते हैं। जो भी सुख चाहता है, आराम चाहता है, प्यार चाहता है, करुणा चाहता है, शक्ति चाहता है, धन चाहता है, सब उसकी खोज में हैं। केवल यह भूल गए हैं कि जिन वस्तुओं के पीछे वे भागते फिरते हैं वह केवल छाया है, वास्तविक नहीं। वास्तविकता इनसे परे है, इनके पीछे है। इनसे अलग भी है। और ये बड़े–बड़े वैज्ञानिक, ये परमाणुओं को तोड़नेवाले, मंगल और बृहस्पति में, इनसे भी आगे पहुँचने का प्रयत्न करनेवाले–ये क्या चाहते हैं? ये भी उसी को चाहते हैं। उसी को प्रकृति और माया में ढूँढते फिरते है। दौड़ते हुए आगे बढ़ रहे हैं कि कहीं वह मिल जाये।

परन्तु इस प्रकार वह मिलता नहीं। कोरे ज्ञान की बातें करने से नहीं मिलता। वह मिलता है उस समय जब इस मन–मन्दिर के कपाट खुलते हैं और जब इसमें प्रभु प्रीतम के लिए सच्चा प्यार जाग उठता है।

शेष अगले अंक में....

महर्षि के शब्दों में वेदों की महत्ता

● खुशहाल चन्द्र आर्य

स्वामीजी चित्तौड़ से चलकर मिती द्वितीय श्रावण बदी 13 सं. 1939 तदनुसार सन् 1882 में उदयपुर पधारे। वहाँ नौ–लखा महल में विराजमान हुए। उदयपुर में पधारने के एक मास बाद मौलवी अब्दुर्रहमान ने स्वामी जी से वेदों सम्बन्धी कुछ प्रश्नोत्तर किये, जो इसी भाँति है।

प्रश्न 1:– ऐसा कौन सा धर्म है, जिसकी धर्म पुस्तक सब मनुष्यों की बोल–चाल और प्राकृत नियमों को सिद्ध करने में प्रबल हो।

उत्तर:– मत–सम्बन्धी सारी पुस्तकें हठ धर्मी से भरी पड़ी हैं। इसलिए उनमें विश्वास के योग्य एक भी पुस्तक नहीं है। मेरी सम्मति में जो पुस्तक ज्ञान सम्बन्धी है, वही सत्य है। उसमें पक्षपात नहीं हो सकता। ऐसी ही पुस्तक का सृष्टि क्रम के अनुकूल होना सम्भव है। मेरे आज तक के अन्वेषण में वेद ही ऐसी पुस्तक है। वह किसी एक देश की भाषा में नहीं है। वह ज्ञानमय है और उसकी भाषा भी ज्ञान भाषा है। इसलिए वेद पर ही निश्चय करना चाहिए।

प्रश्न 2 :– क्या वेद, मत की पुस्तक नहीं है ?

उत्तर:– नहीं, वह ज्ञान की पुस्तक है।

प्रश्न 3 :– मत का आप क्या अर्थ करते हैं?

उत्तर:– पक्षपात युक्त मन्तव्यों के समुदाय को मत कहते हैं।

प्रश्न 4 :– हमारे पूछने के अभिप्राय का उत्तर आपने वेद बताया है, सो क्या वेद में वे सब गुण पाये जाते हैं?

उत्तर:– हाँ! पाये जाते हैं।

प्रश्न 5 :– आपने कहा कि वेद किसी देश की भाषा में नहीं है। जो भाषा किसी भी देश की नहीं है, वह सब भाषाओं पर कैसे प्रबल हो सकती है ?

उत्तर:– जो देश विशेष की भाषा होती है, वह व्यापक नही हो सकती।

प्रश्न 6 :– जब वह भाषा किसी देश की नहीं है तो वह सब पर कैसे प्रबल हो सकती है ?

उत्तर:– जैसे आकाश किसी एक स्थान का नहीं है, परन्तु सर्वत्र व्यापक है, ऐसे ही वेदों की भाषा देश–भाषा न होने से सब भाषाओं में व्यापक है।

प्रश्न 7 :– यह भाषा किसकी है ?

उत्तर:– ज्ञान की।

प्रश्न 8 :– इसका बोलने वाला कौन है ?

उत्तर:– इसका बोलने वाला सर्वदेशी परब्रह्म है।

प्रश्न 9 :– इसका सुनने वाला कौन है ?

उत्तर:– इसके सुनने वाले अग्नि आदि चार ऋषि सृष्टि के आदि हुए हैं। उन्होंने परमात्मा से सुनकर सब मनुष्यों को सुनाया है।

प्रश्न 10 :– ईश्वर ने यह भाषा उन्हीं को क्यों सुनाई ? क्या वे इस बोली को जानते थे ?

उत्तर:– वे चारों सर्वोत्तम थे। ईश्वर ही ने उनको तत्काल भाषा का भी ज्ञान करा दिया था।

प्रश्न 11 :– आप इसमें क्या युक्ति देते हैं ?

उत्तर:– कारण के बिना कार्य नहीं होता। यही युक्ति है और ब्रह्मादि ऋषियों की साक्षी है।

प्रश्न 12 :– भूमण्डल भर के सारे मनुष्य क्या एक ही कुल के हैं ?

उत्तर:– भिन्न–भिन्न कुलों के हैं। आदि सृष्टि में उतने ही जीवन मनुष्य–शरीर धारण करते हैं, जितने गर्भ सृष्टि में शरीर धारण करने के योग्य होते हैं। वे जीव असंख्य होते हैं।

प्रश्न 13 :– इस पर कोई युक्ति दीजिए ?

उत्तर:– अब भी सब अनेक माँ–बाप की सन्तान हैं।

प्रश्न 14 :– जो आकृतियाँ मनुष्यों की हैं, उनके तन क्या एक ही प्रकार के बने थे ?

उत्तर:– आदि में मनुष्यों में रंग और लम्बाई–चौड़ाई आदि का भेद अवश्य था।

प्रश्न 15 :–सृष्टि की उत्पत्ति कब हुई ?

उत्तर:– सृष्टि को उत्पन्न हुए एक अरबछियानवे करोड़ और कई लाख वर्ष बीत गये हैं।

प्रश्न 16 :– आप किसी मत के नियमों का पालन करते हैं कि नहीं ?

उत्तर:– जो धर्म ज्ञानानुकूल है, मैं उसके सारे नियमों का पालन करता हूँ।

प्रश्न 17 :– क्या उपादान कारण अनादि है ? आप कितने पदार्थों को अनादि मानते हैं ?

उत्तर:– उपादान कारण अनादि है। जीवात्मा, परमात्मा और प्रकृति–ये तीन पदार्थ अनादि हैं। इनका परस्पर संयोग–वियोग, कर्म और कर्मो का फल–भोग प्रवाह से अनादि है।

प्रश्न 18 :– जो वस्तु हमारी बुद्धि की सीमा से बाहर है, हम उसे अनादि कैसे मान लें ?

उत्तर:– जो वस्तुयें नहीं हैं, वे कभी भी नहीं हो सकतीं। जो हैं, वे पहले भी थीं और आगे को भी बनी रहेंगी।

प्रश्न 19 :– वेद यदि ईश्वर का बनाया हुआ होता, तो सूर्यादि की भाँति सारे संसार के सब मनुष्यों को इससे लाभ पहुँचता।

उत्तर:– वेद पवित्र, सूर्यादि पदार्थों की तरह ही सब को लाभ पहुँचाता है। सारे धर्मो के ग्रन्थों और विद्या की पुस्तकों का कारण वेद ही है। यह सबसे पहले है, इसलिए जितने शुभ विचार और ज्ञान की वार्तायें दूसरे ग्रन्थों में पाई जाती हैं, वे सब वेद से ली गई हैं। हानिकारक कथायें उन ग्रन्थों के कर्त्ताओं की अपनी मन–घडन्त हैं। वेद में किसी का खण्डन–मण्डन नहीं पाया जाता, इसलिए वह पक्षपात रहित है जैसे सृष्टि–विद्या वाले सूर्यादि से अधिक लाभ लेते हैं, ऐसे ही वेद का अनुशीलन करने वाले वेद से भी अधिकाधिक उपकार प्राप्त करते हैं।

इस लेख से महर्षि दयानन्द की वेदों के प्रति आस्था एवं ज्ञान का परिचय होता है। इसीलिए महर्षि ने आर्य समाज के दस नियमों में तीसरा नियम **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ पुरुषों) का परम् धर्म है"** बनाया है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है जिसे ईश्वर ने सृष्टि के आदि में चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा थे, उनसे चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं क्रमशः कहलवाए। इनमें बताया गया है कि मनुष्य को अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए क्या काम करने चाहिएँ और क्या काम नहीं करने चाहिएँ। मनुष्य, वेदानुसार चलने से ही अपना तथा दूसरों का जीवन सुखी व आनन्दमय बना सकता है और अन्त में मृत्यु के बाद मोक्ष प्राप्त कर सकता है। जहाँ एक लम्बी अवधि तक ईश्वर के सान्निध्य में रहते हुए परम् आनन्द को प्राप्त करता है।

लेखक ने कविता के रूप में महर्षि को वेदों का उद्धारक बताते हुए वेदों की महत्ता को इस प्रकार प्रकट किया है।

महर्षि दयानन्द ने इन्सानों को, बेहतर
जीना सिखा दिया।
खोलकर बन्द स्रोतों को, पुनः वेदामृत
पीना सिखा दिया।।
पड़ा हुआ था वह, अज्ञान, अविद्या के
अन्धेरे में,
घूम रहा था वह, धूर्त, पाखण्डियों के
डेरे में,
कर्म हीन बना हुआ था, पड़ा भाग्य के
फेरे में,
मृत्य जीवन जी रहा था, निराशाओं के
घेरे में,
वेद–सूर्य को चमका, अज्ञान,
अन्धविश्वास व पाखण्ड को मिटा
दिया।
महर्षि दयानन्द ने इन्सानों को, बेहतर
जीना सिखा दिया।
खोलकर बन्द स्रोतों को, पुनः वेदामृत
पीना सिखा दिया।।

180 महात्मा गांधी रोड (दो तल्ला)
कोलकाता–700007

ईश्वर स्तुति के लाभ

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

ईश्वर में आस्था न रखने वाले लोग अक्सर यह पूछते हैं कि जब मनुष्य अपने कर्म करने के लिए स्वतंत्र है और वह किसी कार्य को करने, न करने अथवा किसी अन्य प्रकार से करने के लिए स्वतंत्र है तो वह ईश्वर की स्तुति क्यों करे? और फिर ईश्वर को न्यायकारी कहा जाता है तो वह न्यायकारी ईश्वर हमारी प्रशंसा, चाटुकारिता या स्तुति का भूखा नहीं है और न ही हमारे स्तुति करने से वह अपनी न्याय व्यवस्था भंग करके स्तुति करने वालों को उनके दुष्कर्मों का दंड न देकर उनकी स्तुति से प्रभावित होकर क्षमादान देते हुए अच्छी नियति पुरस्कार स्वरूप देगा। अब यदि न्यायकारी ईश्वर स्तुति करने पर भी न्याय व्यवस्था को भंग नहीं करेंगे तो प्रश्न उठता है कि ईश्वर स्तुति के क्या लाभ हैं ?

क्रान्तदर्शी देव दयानन्द ने आर्योद्देश्यरत्नमाला में जहाँ स्तुति को परिभाषित किया वहीं साथ ही साथ स्तुति के लाभ भी बतला दिये। ईश्वर की स्तुति करना हम मनुष्यों का प्रथम कर्तव्य, नैतिक दायित्व बन जाता है। सृष्टिकर्ता परमपिता परमेश्वर ने हम सभी मनुष्यों के उपयोग एवं उपभोग के लिए ही इस समस्त प्रकृति और इसके ऐश्वर्यों की रचना की है और हम मनुष्य अपने पूरे जीवन ईश्वर प्रदत्त ऐश्वर्यों का दोहन करते हैं। हमें प्राण वायु, सूर्य की रोशनी ऊष्मा, खाने के लिए विविध प्रकार की वनस्पति, धरती माता के गर्भ से निकले खनिज पदार्थ आदि हर वस्तु परमपिता परमेश्वर द्वारा प्रदत्त ही तो है। इस पर भी यदि हम उस सृष्टिकर्ता पालनकर्ता परमपिता की स्तुति नहीं करते तो निश्चित रूप से हम कृतघ्नता दोष के भागी बनेंगे। वैसे भी लौकिक जीवन में यदि गर्मी के मौसम में प्यास लगने पर कोई एक लोटा शीतल जल पिला दे तो हम उसका धन्यवाद अवश्य करते हैं और वहीं दूसरी ओर ईश्वर जिसने

शेष पृष्ठ 5 पर ☞

सौ वर्षों तक कर्म करते हुए जीने की इच्छा कर

● कन्हैया लाल आर्य

यजुर्वेद के 40वें अध्याय का दूसरा मंत्र है –

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कमणि जिजीवेषेच्छतं समः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।

(**इह**) यहाँ इस में (**कर्माणि**) सत्कर्मों को करता हुआ (**शत समाः**) सौ वर्षों तक (**जिजीविषेत**) जीने की इच्छा कर (**एवम्**) इस प्रकार (**त्वयि**) तुझ (नरे) मनुष्य में कर्म (**न लिप्यते**) नहीं लिप्त होता है (**इतः**) उससे (**अन्यथा**) दूसरा और कोई मार्ग (**न**) नहीं है।

1) कर्म करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर।

2) कर्म करते हुए अपने आप को इस में लिप्त मत कर।

इस मानव जीवन में हमने कर्मों को करते हुए ही जीना है।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं–

1) शुभ कर्म।

2) अशुभ कर्म

3) शुभाशुभ मिश्रित कर्म।

वेद कहता है "शुभ कर्म करो"। अशुभ व मिश्रित कर्म मत करो अन्यथा बन्धन में पड़े रहोगे। शुभ कर्मों में भी यदि लिप्त हो जाओगे तो भी शुभ कर्मों का फल भोगने के लिए जन्म लेना ही पड़ेगा, जन्म लेना ही बन्धन है। शुभ कर्म भी साधन है, साध्य नहीं। इसलिए उसमें लिप्त नहीं होना। उनके फल की इच्छा मत करना। हम कर्म करने के लिए स्वतंत्र हैं लेकिन फल पाने में परतंत्र हैं। भगवान कृष्ण का गीता में यही मुख्य संदेश है –अतः कर्म करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर। जगत् में कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो क्रिया रहित हो। संसार का नियम ही क्रिया है यह संसार **संसरति** निरंतर चल रहा है, जगत् है गति में है। सृष्टि का महान से महान कार्य करने वाला सूर्य प्रति क्षण गति में रहता है, पृथ्वी गतिमान है, चन्द्रमा गति में है, सृष्टि का प्रत्येक कण गतिमान् है, प्रत्येक ग्रह उपग्रह गतिमान् हैं। जब कर्म का साम्राज्य जगत्–व्यापी है तो मनुष्य उससे किस प्रकार बच सकता है। फिर मनुष्य के अकर्मण्य होने का क्या तात्पर्य? अतः वेद का यह मंत्र हमें पल–पल कर्मनिष्ठ होने की प्रेरणा दे रहा है। यह मंत्र जीवन की अंतिम घड़ी तक कर्म करने की ओर इंगित कर रहा है।

इस मंत्र में आगे कहा है "सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर।" केवल इच्छा ही मत कर बल्कि पुरुषार्थ भी कर। सौ वर्षों तक जीने के लिए तीन बातों का पालन करना आवश्यक है :–

1) आहार :– सात्विक आहार लिया जाना चाहिए।

2) निद्रा :– आयु अनुसार उचित निद्रा भी लेनी चाहिए।

3) ब्रह्मचर्य : – शरीर, मन और वाणी से कभी भी ब्रह्मचर्य विहीन नहीं होना चाहिए।

गृहस्थ में सन्तान तो उत्पन्न करें परंतु जीवन को वासना के कीचड़ में न लिप्त करें।

स्वामी दर्शनानंद जी महाराज ने अपनी पुस्तक 'उपनिषद् प्रकाश' में इस मंत्र की व्याख्या में एक दृष्टान्त इस प्रकार दिया गया है – एक बार किसी धनी के पास एक मनुष्य पहुँचा और उससे नौकरी की माँग की। सेठ ने कहा – 'क्या वेतन लोगे?' नौकरी के अभिलाषी ने कहा, 'मेरा वेतन यही है कि मुझे हर समय कार्य मिलता रहे, जब तुम कार्य नहीं दोगे तो मैं तुम्हें मार डालूँगा'। धनी ने सोचा, यह तो बहुत अच्छा सेवक है, वेतन भी नहीं माँग रहा, सारे कार्य करने को उद्यत है। इस प्रकार सोचकर धनी व्यक्ति ने उसको नौकर रख लिया। नौकर की शर्त मान ली गई। नौकर बहुत शीघ्रकारी थी। सेठ के मुँह से कार्य निकला नहीं कि नौकर उस कार्य को पूरा कर देता। कुछ ही दिनों में धनी के सब कार्य समाप्त हो गये। अब उसे चिंता हुई कि यह मुझे मार डालेगा। इस चिंता से धनी व्याकुल रहने लगा। खान–पान नीरस हो गया। एक दिन धनी के पास कोई बुद्धिमान मित्र आये। उन्होंने कहा इतनी धन–संपत्ति होते हुए भी इतने दुर्बल क्यों होते जा रहे हो? धनी ने सारी कथा कह सुनाई। उस मित्र ने कहा कि तुम इसे अपने केवल अपने कार्यों में क्यों लगाते हो, पड़ोसी के, मोहल्ले वालों के, नगर के, सारी मानवता के कार्यों को अपना समझकर इसमें इसे लगाओ। ये असंख्य कार्य इससे नहीं निपटेंगे और तुम इसके हाथों से बचे भी रहोगे। यही अवस्था हमारे मन की है। जिस समय यह शुभ कार्यों से जरा–सा अलग हुआ नहीं कि नाशकारी कामों में लग जायेगा, अतः मन को सदैव शुभ कर्मों में लगाए रखो। ऐसे करने से मुक्ति मिलेगी।

निष्काम कर्म ही मोक्ष देने वाले हैं, सकाम कर्म पुनर्जन्म की ओर ले जाते हैं। सांसारिक सुख को सामने रखकर जो कर्म किए जाते हैं उन्हें सकाम कर्म कहते हैं। अतः यदि बंधन से मुक्त होना है तो मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की बजाय जन्म ही न हो तो उसके लिए हमें निष्काम कर्म करने होंगे। जब कर्मों को कर्तव्य समझकर किया जाता है तो फल की इच्छा नहीं होती, संतोष बना रहता है। कर्म का त्याग नहीं करना है। पूरे जीवन भर करते जाना है और पूरे जीवन भर शुभ कर्मों के फल की इच्छा भी नहीं करनी है, यह परम संतोष है। शान्ति एवं आनंद प्रदान करने वाला है। ऐसा कर्म बंधन नहीं होता। जिस प्रकार कमल कीचड़ में रहता हुआ भी अपने आपको कीचड़ में लिप्त नहीं करता, उसी प्रकार हमें भी कर्मों में लिप्त नहीं होना है। तभी हम सभी कार्य ईश्वर आज्ञा मानकर करेंगे और हमें फल की इच्छा भी नहीं रहेगी। फल की इच्छा को सामने रखकर, कर्म करने की इच्छा की पूर्ति होने पर हर्ष, सुख और न पूरी होने पर शोक व अशान्ति पैदा होती है। कर्म करने के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इस पर जीवन सोचने लगा कि इतना लम्बा जीवन जीकर क्या करूँगा। जीवन जितना लम्बा होगा उतने ही अधिक पाप होंगे। कर्म करना भी तो भय से रहित नहीं है। कर्म का फल भोगना पड़ेगा। फल भोगने के लिए शरीर धारण करना पड़ेगा तो मानव झंझटों में ही फँसा रहेगा। ऐसा सोचकर जीवन उदास हो जाता है तभी तो कहा है कि कर्म तो कर और फल की इच्छा मत कर। इस प्रकार की जब हमारी सोच बन जायेगी जो हमें कर्म लिप्त न कर सकेंगे। जो लोग दूसरों की भलाई के लिए कर्म करते हैं, सदा सुखी रहते हैं। इसलिए परोपकार की भावना, जो शुभ है, सदा मन मे रखकर संसार के उपकार के लिए सुखी रहते हैं। इसलिए परोपकार की भावना, जो शुभ है, सदा मन में रखकर संसार के उपकार के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए। जब तक प्राण है कभी इस परोपकार के कर्मों से अलग नहीं होना चाहिए। मनुष्य जीवन बहुत ही मूल्यवान है, इसे व्यर्थ में नहीं बिताना चाहिए। जो लोग ईश्वर आज्ञा की उपेक्षा कर व्यर्थ में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं वे मूर्ख हैं। जो स्वार्थ के बिना निर्लिप्त भाव से संसार के उपकार में लगे रहते हैं उनके कर्म बंधन का कारण नहीं बनते। अतः शुभ–अशुभ कर्मों पर विचार करके सौ वर्षों तक पुरुषार्थ करते हुए जीवन को व्यतीत करें। जीवन की सार्थकता इसी में है। यही जीवन का सार है।

–04/45, शिवाजी नगर गुड़गांव

☞ *पृष्ठ 4 का शेष*

ईश्वर स्तुति ...

हमें जीवन और जीवन में उपयोग की समस्त सामग्री दी उसकी स्तुति करना हम जरूरी नहीं समझते।

ईश्वर की स्तुति करने से अनेकों प्रत्यक्ष लाभ स्पष्ट दिखाई देते हैं। ईश्वर की स्तुति करते समय हम जिन ईश्वरीय गुणों की चर्चा करते हैं उन गुणों की अपने जीवन में ग्राह्यता को बढ़ाते हैं। ईश्वरीय गुणों को गाते समय जब हम कहते है कि ईश्वरीय दयालु है तो दया का भाव हमारे जीवन में भी आए ऐसी अपेक्षा रखते हैं और हम भी अपने साथियों, सहयोगियों या अपने जीवन में अपने पद पर बैठ कर हम भी इस गुण का पालन करें अर्थात किसी भी स्वार्थ की भावना के वशीभूत हम न्याय आचरण को कदापि नहीं त्यागें। ईश्वर स्तुति करते हुए हम भी ईश्वर प्रदत्त वेदज्ञान का स्वाध्याय करते हुए अपने ज्ञान में वृद्धि करने का प्रयास करें। इस प्रकार की ईश्वरीय गुणों की स्तुति सगुण स्तुति कहलाती है। अब यदि हम रोजाना केवल ईश्वरीय गुणों को गा लें लेकिन इन गुणों का समावेश अपने जीवन में न करें तो हमारी स्थिति उस जड़ टेपरिकार्डर सरीखी हो जायेगी जो केवल बज सकता है। अतः स्तुति करते समय जिन ईश्वरीय गुणों को हम याद करें उनको अपने जीवन में धारण करने का प्रयास पुरुषार्थ भी अवश्य करें।

ईश्वरीय गुणों की स्तुति से हमारी ईश्वर के प्रति प्रीति बढ़ती है। ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव को जान मान कर हम गुणगान करते हैं और उन्हें अपने जीवन में धारण करने का पुरुषार्थ करते हैं तो निश्चित रूप से हमारी प्रीति उस परमपिता परमेश्वर से बढ़ती है और हम अपने जीवन को ईश्वरीय पारस के संसर्ग से उन्नत कर सकते हैं। ईश्वरीय गुणों के गुणगान से हमारे अंदर निरअभिमानता आती है अर्थात् हमारे झूठे अहंकार का भाव समाप्त हो जाता है क्योंकि हम परमपिता परमेश्वर का सर्वश्रेष्ठ जान मान कर समर्पण भाव से स्तुति गान करते हैं। ईश्वर की स्तुति करने से हमारी आत्मा में आर्द्रता का भाव उत्पन्न होता है जो गुणों की ग्राहयता को बढ़ाता है।

इस प्रकार हमें सदा दैनिक नित्य कर्म के रूप में ईश्वर की स्तुति अवश्य करनी चाहिये।

502 जी एच 27 सैक्टर 20 पंचकूला
मो. 09467608686

यज्ञोपवीतमसि

(यज्ञोपवीत सम्बन्धी गुरु–शिष्य संवाद)

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

गुरुकुल में उपनयन संस्कार का दृश्य। ब्रह्मचारियों को यज्ञोपवीत धारण कराये जा रहे हैं लेकिन ब्रह्मचारी या शिष्य बुद्धिमान तथा तर्कशील होने के कारण पहले अपनी जिज्ञासाओं का समाधान चाहते हैं। अतः इस नाटिका में गुरु–शिष्य के माध्यम से यज्ञोपवीत सम्बन्धी जिज्ञासाओं के निराकरण का यथासम्भव प्रयास किया गया है

शिष्य : गुरुजी, आज पहली बार यज्ञोपवीत पहनाकर आप हमें किस बन्धन में डालना चाहते हैं ?

गुरु : वत्स, जिसको तुम बन्धन कहते हो, उसको मैं मर्यादा पालन कहता हूँ। मर्यादा पालन के लिए थोड़ा बहुत बन्धन तो स्वीकार करना ही पड़ता है। जब माँ बच्चे को गोद में लेती है तो उसे दोनों हाथों से कस लेती है, क्या यह भी एक प्रकार का बन्धन नहीं है? पर इस बन्धन में बच्चा अपनी मर्यादा में रहता है और गिरने से बच जाता है। यज्ञोपवीत भी वैदिक मान्यताओं के परिपालन का मर्यादित माध्यम है।

शिष्य : यज्ञोपवीत धारण कराकर आप हमारी कौन सी पहचान बना रहे हैं ?

गुरु : वत्स, प्रत्येक धर्मानुयायी की अपनी पहचान होती है। सिक्ख लोग पगड़ी पहनते हैं। मुस्लिम लोग विशेष प्रकार की टोपी पहनते हैं। पंडित जी भी माथे पर तिलक लगाते हैं। इसी प्रकार आर्य समाजी या वैदिक मतानुयायी की पहचान यज्ञोपवीत है। आर्य समाजियों में कुछ बातों में मत भिन्नता हो सकती है। लेकिन यज्ञोपवीत धारण करने में सभी एकमत हैं। दूसरे शब्दों में कहूँ तो यज्ञ और यज्ञोपवीत आर्यत्व के बोधक है।

शिष्य : यदि यज्ञोपवीत धारण न किया जाय तो ?

गुरु : यदि कोई सैनिक अपनी वेश–भूषा न पहने तो, यदि कोई विद्यार्थी कक्षा में अपनी वेश–भूषा में न जाये तो ? वत्स, यज्ञोपवीत आर्य की गरिमा का प्रतीक है। यह ऐसा सूत्र है जो साधक को खींचकर परमात्मा के निकट ले जाता है।

शिष्य : यह तो आपने बहुत ही मौलिक बात कही। हमारी जिज्ञासा बढ़ने लगी है। आप 'यज्ञोपवीत' शब्द की संरचना के बारे में कुछ कहें। सुनो शिष्या! 'यज्ञोपवीत' शब्द तीन शब्दों के योग से बना है और वे तीन शब्द हैं– 'यज्ञ + उप + वीत' पहले यज्ञ शब्द पर विचार करते हैं। इसके दो अर्थ होते हैं। पहला अर्थ है देवपूजा, संगतिकरण और दान। यज्ञ शब्द का दूसरा अर्थ ईश्वर है '**यज्ञो वै विष्णुः**' अर्थात् ईश्वर को भी यज्ञ कहते हैं। इस प्रकार यज्ञोपवीत का पहला अर्थ होगा–देवपूजा आदि श्रेष्ठ कर्म करने के लिए जिस सूत्र को 'उप' अर्थात् बायें कंधे में धारण किया जाय, उसे यज्ञोपवीत कहते हैं। दूसरा अर्थ होगा, यज्ञ अर्थात् ईश्वर की 'उप' निकटता प्राप्त करने के लिए जिस सूत्र को 'वीत' कंधे में धारण किया जाय, उसे यज्ञोपवीत कहते हैं।

शिष्य : गुरुजी, आपने तो यज्ञोपवीत की अत्यन्त सुन्दर व्याख्या की है। मैं तो अब तक तीन धागों के मेल को ही यज्ञोपवीत मानता था। आपने इस शब्द में भौतिकता और आध्यात्मिकता दोनों का समन्वय कर दिया है। पर क्या इसके अन्य नाम भी हैं ?

गुरु : हाँ क्यों नहीं। यज्ञोपवीत के अन्य नाम भी हैं। इसको 'सावित्री सूत्र' भी कहते हैं क्योंकि इसको सावित्री अर्थात् गायत्री मंत्र का उच्चारण करके धारण किया जाता है। इसको 'द्विजा यनी सूत्र' भी कहते हैं क्योंकि यज्ञोपवीत को धारण करना मानो दूसरा जन्म प्राप्त करना है। इसका नाम 'व्रतबंध' भी है क्योंकि यह मनुष्य को संकल्प में बांध देता है। इसको 'ब्रह्मसूत्र' भी कहते हैं क्योंकि यह मनुष्य को ईश्वर से जोड़ने का सूत्र है।

शिष्य : आपने कहा कि यज्ञोपवीत धारण करना दूसरा जन्म प्राप्त करने जैसा है, कृपया इसे स्पष्ट करें।

गुरु : वत्स, माता की कोख से जन्म लेना, यह पहला जन्म है और फिर आचार्य या गुरु द्वारा यज्ञोपवीत धारण करना, यह दूसरा जन्म है–

'मातुरग्रे जननं द्वितीयं मौलिबधनम्।'

शिष्य : क्या किसी भी आयु में यज्ञोपवीत धारण किया जा सकता है ?

गुरु : नहीं, प्रत्येक वर्ण के लिए आयु निर्धारित है। ब्राह्मण स्वभाव वाले बालक को आठवें वर्ष में, क्षत्रिय स्वभाव वाले बालक को ग्यारहवें वर्ष में तथा वैश्य स्वभाव वाले व्यक्ति को बारहवें वर्ष में यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।

शिष्य : गुरुजी, यज्ञोपवीत को शरीर में कैसे धारण करना चाहिए?

गुरु : बड़े ध्यान से सुनो वत्स, यज्ञोपवीत बायें कंधे से धारण किया जाता है। कंधे से ऊपर मस्तिष्क है। यज्ञोपवीत के सूत्र के घर्षण से मस्तिष्क जाने वाली नसें सक्रिय हो जाती हैं तथा मस्तिष्क भी सजग तथा क्रियाशील हो जाता है। फिर यज्ञोपवीत के सूत्र हृदय से गुजरते हैं। हृदय में श्रद्धा का भाव होता है। तत्पश्चात् वे सूत्र कटि स्पर्श करते हैं। कटिस्पर्श करते ही मनुष्य महान संकल्प के लिए कटिबद्ध हो जाता है। इस प्रकार यज्ञोपवीत के सूत्र तीन स्थानों को स्पर्श करके मस्तिष्क, हृदय और शरीर को सक्रिय कर देते हैं।

शिष्य : आपने मुझे नया चिन्तन तथा नई सोच दी है परन्तु मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि यज्ञोपवीत में तीन सूत्र (धागे) क्यों होते हैं?

गुरु : यह बात स्पष्ट करने के लिए मैं सामवेदीय छान्दोग्यसूत्र के श्लोक को प्रस्तुत करता हूँ–

ब्रह्मणोत्पादितं सूत्रं विष्णुना त्रिगुणीकृतम्।
कृतो ग्रन्थिस्त्रिनेत्रेण गायत्र्याचाभिमंत्रितम्।।

अर्थात् ब्रह्मा ने तीनों वेदों से तीन धागों का सूत्र बनाया। विष्णु ने ज्ञान, कर्म और उपासना से तिगुना किया तथा शिवजी ने गायत्री से अभिमंत्रित करके ब्रह्म गाँठ लगा दी।

शिष्य : गुरुजी, मैंने सुना है कि तीन ऋणों से मुक्त होने के लिए यज्ञोपवीत धारण किया जाता है।

गुरु : हाँ, तुमने ठीक सुना है। मनुष्य उत्पन्न होते ही तीन ऋणों के बोझ से दब जाता है। संस्कृत में कहा गया है– **जायमानो हि ब्राह्मणस्त्रिभिः ऋणवान्। ब्रह्मचर्येण सः ऋषिभ्यः, यज्ञेन देवेभ्यः, प्रजया पितृभ्यः।**

अर्थात् मनुष्य ब्रह्मचर्य से ऋषि ऋण, यज्ञ से देव ऋण तथा प्रजा पालन से पितृ ऋण से मुक्त हो जाता है।

शिष्य : कृपया इस विषय को और स्पष्ट कर दीजिए।

गुरु : वत्स, हम पर तीन ऋण हैं–ऋषि ऋण, पितृ ऋण और देव ऋण। ऋषि ऋण के अन्तर्गत आचार्य, ऋषि–मुनि, शिक्षक, गुरुजन आदि आते हैं जिनसे हम ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। पितृ ऋण के अन्तर्गत माता–पिता आते हैं जो हमारा पालन–पोषण करते हैं। वे हमें इस योग्य बना देते हैं कि हम महान जीवन जी सकें। देव ऋण दो प्रकार है–जड़ और चेतन। जड़ के अन्तर्गत, सूर्य, चन्द्रमा, वायु अग्नि आदि देवता आते हैं जिनके कारण हम जीवित रहते हैं। विद्वान, अतिथि, आचार्य, मार्ग दर्शक आदि पूज्य व्यक्तियों की गणना चेतन देवताओं के अन्तर्गत की जा सकती है। जिनमें दिव्यता होती है वे ही देवता कहलाते हैं। उन देवताओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने हुए, उनमें ईश्वरीय सत्ता की झलक देखते हुए ही हम कहते हैं– **अग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा** आदि।

शिष्य : क्या यज्ञोपवीत के तीन सूत्र मनुष्य की तीन अवस्थाओं के प्रतीक माने जा सकते हैं ?

गुरु : हाँ, तुमने ठीक कहा। ये तीन अवस्थायें हैं– बचपन, यौवन और बुढ़ापा। इसी प्रकार यज्ञोपवीत के तीन धागे सत्व, रज, तम तीन गुणों, उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय तीन प्राकृतिक अवस्थाओं तथा भूः, भुवः और स्वः तीन व्याहृतियों के बोधक भी माने जा सकते हैं।

शिष्य : क्या महिलाओं को भी यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार है ? क्या हमारे प्राचीन ग्रन्थों में इसका संकेत मिलता है ?

गुरु : हाँ क्यों नहीं ? तुमने सस्कृत साहित्य के ग्रन्थ 'कादम्बरी' का नाम तो सुना होगा। उसकी नायिका का नाम है–महाश्वेता। उसके बारे में कहा गया है–'**ब्रह्मसूत्रेण पवित्री कृत कायाम्**' अर्थात् उसने अपने शरीर में यज्ञोपवीत धारण किया हुआ था।

शिष्य : क्या शूद्र भी यज्ञोपवीत धारण कर सकता है?

गुरु : हाँ, गुण सम्पन्न, सदाचारी शूद्र यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकारी है। प्रमाण के रूप में निम्नलिखित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं– '**शूद्रमपि कुलगुण सम्पन्नं मंत्र वर्णमुपवीतं अध्यापयेत्।**'

शिष्य : हम 'ब्रह्म ग्रन्थि' शब्द तो सुनते हैं पर उसका अभिप्राय नहीं जानते।

गुरु : वत्स, 'ग्रन्थि' का अर्थ होता है– गाँठ। इसी प्रकार 'ब्रह्म' शब्द भी ईश्वर का वाचक है। यज्ञोपवीत के तीनों धागे या सूत्र यज्ञोपवीत तब कहलायेंगे जब वे एक गाँठ से बँधे होंगे। यदि गाँठ नहीं तो वे भी यज्ञोपवीत नहीं। इसी प्रकार तीन ऋणों से मुक्त होने की सार्थकता तभी है जब हम परमपिता परमेश्वर (ब्रह्म) के प्रेम की गाँठ से बंधे हुए होंगे। अर्थात् यही यज्ञोपवीत बह्म प्रप्ति का साधन भी माना जा सकता है।

शिष्य : क्या यज्ञोपवीत को ऐसे ही धारण कर लेना चाहिए या इसको धारण करने का कोई मंत्र होता है ?

गुरु : इसका पूरा विधान है। उपनयन संस्कार में आचार्य, गुरु या ब्रह्मा द्वारा मंत्रोच्चारण पूर्वक यज्ञोपवीत धारण कराया जाता है।

शिष्य : क्या आप इस मंत्र को तथा उसके अर्थ को स्पष्ट करने की कृपा करेंगे ?

गुरु : सुनो, यज्ञोपवीत धारण करने का मंत्र है –

'यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत सहजं परस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।।

शिष्य : कृपया इसका अर्थ भी स्पष्ट कर दीजिए।

गुरु : प्रिय पुत्र, मैं तो अल्पज्ञ हूँ। जितना

शेष पृष्ठ 11 पर

पूज्य स्वामी सत्यपति परिव्राजक की तपःस्थली आर्यवन रोजड़

● ब्र. राजेन्द्रार्य

आर्यावर्त्त राष्ट्र को गुजरात प्रान्त ने अनेकों महापुरुष प्रदान किये हैं। उनमें से प्रमुख रूप से राष्ट्र पितामह स्वामी दयानन्द सरस्वती, राष्ट्रभक्त पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी एवं कुशल राजधर्म पालक लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल का नाम इतिहास के पृष्ठों में स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। गुजरात की पुण्य भूमि में स्थित साबरकांठा जनपद के रोजड़ नामक ग्राम में पूज्य गुरुवर्य श्री स्वामी सत्यपति परिव्राजक ने आर्यवन को अपना केन्द्र बनाकर भूगोल में विलुप्त होती जा रही योग विद्या व आश्रम व्यवस्था के प्रचार-प्रसार के लिए दर्शन योग महाविद्यालय-रोजड़ की स्थापना चैत्र शुक्ला प्रतिपदा विक्रम संवत् 2043 तदनुसार 10 अप्रैल सन् 1986 में की। इसका प्रारंभिक नाम पूज्य स्वामी जी ने "दर्शन एवं योग प्रशिक्षण शिविर" रखा था। तथा आश्रम प्रणाली को संरक्षित रखने लिए वानप्रस्थ साधक आश्रम को नवम्बर 2005 में विधिवत् प्रारम्भ कर दिया। विद्यालय के सुरम्य वातावरण एवं सुयोग्य आचार्यों से वैदिक दर्शनों, योगाभ्यास, उपनिषदों एवं संस्कृत भाषा का प्रशिक्षण प्राप्त कर देश को लगभग 50 नैष्ठिक युवा विद्वान् प्राप्त हो चुके हैं। श्रद्धेय स्वामी सत्यपति परिव्राजक की प्रेरणा व सहायता से ब्राह्मण वर्ण की योग्यता प्राप्त कर निम्न विद्वानों ने संन्यास आश्रम की दीक्षा ग्रहण की हुई है-

1. श्री स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक- आर्यवन रोजड़ (गुजरात), अध्यापन एवं प्रचारादि।

2. श्री स्वामी ऋतस्पति जी- आर्ष गुरुकुल होशंगाबाद (मध्य प्रदेश), अध्यापन एवं प्रचार।

3. श्री स्वामी ब्रह्मदेव जी- विश्व शान्ति निकेतन, मैसूर (कर्नाटक), प्रचार आदि।

4. श्री स्वामी आशुतोष जी- ऋषि उद्यान, अजमेर (राजस्थान), अध्यापन एवं प्रचार।

5. श्री स्वामी सत्यानन्द जी - पातञ्जल योग आश्रम जोधपुर (राज०), संस्था संचालन व प्रचार।

6. श्री स्वामी धर्म देव जी- आर्ष गुरुकुल कालवा (हरियाणा), शिविर आयोजन।

7. श्री स्वामी विपवड्. जी- ऋषि उद्यान, अजमेर (राजस्थान), शिविर आयोजन।

8. श्री स्वामी मुक्तानन्द जी दर्शनाचार्य- गुरुकुल खेली, सोनीपत (हरियाणा), अध्ययन।

9. श्री स्वामी ध्रुव देव जी दर्शनाचार्य- आर्यवन, रोजड़ (गुजरात), अध्ययन-अध्यापन।

10. श्री स्वामी जगदीशानन्द जी दर्शनाचार्य- जयपुर (राजस्थान), प्रचार।

11. श्री स्वामी वेदपति जी- ऋषि उद्यान, अजमेर (राज०), अध्ययन-अध्यापनादि।

पूज्य स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक ने दर्शन-योग-महाविद्यालय एवं वानप्रस्थसाधक आश्रम की सम्पूर्ण सम्पत्ति अपने उत्तराधिकारी सुयोग्य शिष्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः दर्शनाचार्य, एम.कॉम. को वैदिक धर्म-संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए प्रदान कर दी है। पूज्य गुरुवर्य श्री स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक का जीवन एक अद्भुत प्रेरणादायक विशुद्ध वैदिक संस्कृति को आत्मसात किये होने का दृष्टान्त है। आपका जन्म हरियाणा प्रान्त के रोहतक जिले के फरमाना ग्राम में एक अत्यन्त निर्धन तथा अवैदिक परिवार में विक्रम संवत् 1984 (सन् 1927 ई०) में हुआ। आप लगभग 20 वर्ष तक निरक्षर रहे। लेकिन पूर्व जन्म के प्रबल वैराग्य के संस्कारों के उद्बुद्ध होने के कारण जीवन में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। सन् 1947 के देश विभाजन की हिंसक घटनाओं को देखकर विवेक-वैराग्य और समाधि की प्राप्ति हुई। वर्णमाला के अक्षरों का अभ्यास किया। ऋषि दयानन्द के वैचारिक क्रान्तिकारी ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" का अध्ययन किया। सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने से स्वामी जी को ऐसा आभास होता था कि सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के लेखक ईश्वरोपासक तथा महापुरुष हैं। ग्रन्थ में जो बातें पढ़ीं उन्हें सत्य ही प्रतीत हुईं।

विवेक-वैराग्य उत्पन्न होने से मानव जीवन का चरम लक्ष्य ईश्वर साक्षात्कार समझकर पूज्य स्वामी जी ने 21 वर्ष की अवस्था में आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का व्रत धारण किया। आप 22 वर्ष की अवस्था में परम श्रद्धेय श्री ओमानन्द सरस्वती जी (भूतपूर्व नाम आचार्य भगवान देव), गुरुकुल झज्जर (हरियाणा) के चरणों में उपस्थित हुए। गुरुकुल में रहकर स्वामी जी ने संस्कृत भाषा, व्याकरण-महाभाष्य, दर्शन, उपनिषद् तथा वेदादि ग्रन्थों का श्रद्धापूर्वक अध्ययन किया और गुरुकुल से व्याकरणाचार्य, दर्शनाचार्य, वेदवाचस्पति आदि उपाधियाँ अर्जित कीं। आपके विद्याध्ययन में श्री ओमानन्द सरस्वती जी महाराज, श्री स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक जी, श्री आचार्य सुदर्शन देव जी, श्री आचार्य राजवीर शास्त्री जी, श्री आचार्य महावीर जी मीमांसक, श्री वेदव्रत शास्त्री जी आदि महानुभावों ने बहुत सहायता की। श्री भानाराम जी आर्य, ग्राम-टिटोली, जिला-रोहतक (हरियाणा) ने पूज्य स्वामी जी की आर्थिक सहायता की। इन सभी महानुभावों के महान् उपकारों के प्रति श्रद्धेय स्वामी जी ने सदैव कृतज्ञता व्यक्त की है। आपने अजमेर प्रवास के समय ब्रह्मचारी वेदव्रत जी (श्री वेदव्रत मीमांसक, आचार्य-आर्ष गुरुकुल वडलूर, कामारेड्डी, जिला- निजामाबाद, आन्ध्र प्रदेश) के साथ श्री पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी से कात्यायन श्रौतसूत्र के लगभग साढ़े तीन अध्याय और सम्पूर्ण मीमांसा-दर्शन शाबर भाष्य सहित पढ़ा और साथ-साथ वैदिक धर्म का प्रचार भी करते रहे। मीमांसा-दर्शन के अध्ययन काल में साधनों की न्यूनता रहने पर भी दोनों लोगों ने मिलकर शाबर भाष्य सहित सम्पूर्ण मीमांसा दर्शन का छः बार विचार किया। पूज्य स्वामी जी ने ब्र. वेदव्रत को योग के विषय में यथाशक्ति जानकारी दी। मीमांसा दर्शन के पश्चात् दोनों लोगों ने दिल्ली में श्री स्वामी समर्पणानन्द जी से शतपथ ब्राह्मण का लगभग पौन काण्ड पढ़ा।

विद्याध्ययन के पश्चात् पूज्य स्वामी जी श्री ब्र. वेदव्रत मीमांसक के साथ गुरुकुल सिंहपुरा, सुन्दरपुर जिला-रोहतक (हरियाणा) में रहने लगे। स्वामी जी ने इस गुरुकुल में लगभग तेरह वर्ष पर्यन्त निवास किया। इसी गुरुकुल में रहते हुए अपने श्री ब्रह्ममुनि परिव्राजक से ब्रह्मचर्याश्रम से सीधे संन्यास की दीक्षा चैत्र सुदी प्रतिपदा संवत् 2027 तदनुसार 7 अप्रैल दिन मंगलवार सन् 1970 ई० को ली। इस दीक्षा ग्रहण के समय अपने पूर्व नाम मनुदेव के स्थान पर 'सत्यपति' नाम रख लिया। संन्यास दीक्षा ग्रहण से पूर्व लगभग 25 वर्ष तक जूते न पहनना, खाट पर न बैठना, दिन में न सोना इत्यादि ब्रह्मचर्य सम्बन्धी कठोर नियमों का श्रद्धापूर्वक पालन स्वामी जी महाराज ने किया।

पूज्य स्वामी जी ने सैकड़ों क्रियात्मक योग शिविरों का आयोजन कर ब्रह्म प्राप्ति हेतु हजारों लोगों में रुचि उत्पन्न की। आपने योग मीमांसा, सरल योग से ईश्वर साक्षात्कार, योग दर्शनम् (योगार्थ प्रकाश) आदि आध्यात्मिक ग्रन्थों की रचना की है। 21 नवम्बर सन् 1999 में आपका आर्यवन राजेड़ में देश-विदेश के आर्य सज्जनों द्वारा 51 लाख से भी अधिक राशि के द्वारा अभूतपूर्व सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। पूज्य स्वामी जी महाराज ने यह सम्पूर्ण राशि वानप्रस्थ साधक आश्रम को समर्पित कर दी। आश्रम के लिए आर्यवन विकास फार्म ट्रस्ट की ओर से लगभग 12 एकड़ भूमि प्रदान की गई है। आश्रम में कार्यरत 12 कर्मचारी ईमानदारी एवं अनुशासन के साथ समर्पण की भावना से सेवा का कार्य कर रहे हैं। उत्साही नवयुवक श्री अशोक जी, श्री हेमन्त जी व श्री प्रकाश आदि कार्यालय, पुस्तकालय, बैंक, डाकघर आदि का कार्य बड़ी दक्षता के साथ पूज्य आचार्य जी के निर्देशों में सम्पन्न करते हैं।

तपस्वी योगाभ्यासी वेदभक्त स्वामी सत्यपति जी के सर्वप्रथम दर्शन करने का सौभाग्य हमें बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. प्रशान्त वेदालंकार द्वारा हंसराज कालेज दिल्ली में आयोजित आर्य समाज बुद्धिजीवी सम्मेलन (दिनांक 30 सितम्बर से 2 अक्टूबर 1989 में प्राप्त हुआ। इसी सम्मेलन में भवन के प्रांगण में घास पर शान्त व प्रसन्नचित्त मुद्रा में बैठे हुए ब्रह्मचारी आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः को देखकर मैं काफी प्रभावित हुआ। पूज्य स्वामी सत्यपति जी ने सम्मेलन के प्रथम सत्र में 'गुरुकुल व आर्ष शिक्षा प्रणाली : समस्याएँ और समाधान' के अन्तर्गत "विद्वानों का समादार, सबसे समान व्यवहार" विषय पर महर्षि दयानन्द के चिन्तन के अनुरूप सारगर्भित विचार रखे। पूज्य स्वामी जी की कथनी व करनी में सर्वदा सामञ्जस्य देखने को मिलता है। आपने जो विचार आचार्य के सन्दर्भ में बुद्धिजीवी सम्मेलन में रखे थे। दर्शन-योग-महाविद्यालय रोजड़ के लिए जब उन्होंने आचार्य का चयन किया तो इस बात का ध्यान रखा। वेद के अङ्ग-उपाङ्ग पढ़ाने में समर्थ, योगाभ्यासी और धार्मिक आचार-विचार से युक्त होनहार प्रतिभा श्री ज्ञानेश्वरार्यः, दर्शनाचार्य को विद्यालय के संचालन का उत्तरदायित्व सौंपा। पूज्य स्वामी जी ने सम्मेलन में आज से 21 वर्ष पूर्व आचार्य के कार्याधिक्य की जो समस्याएं रखी थीं, वर्तमान में आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः, के समक्ष विद्यालय एवं वानप्रस्थ साधक आश्रम के जिम्मेदारी पूर्ण काम हैं। आचार्य जी प्रशिक्षक, प्रबन्धक, (हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी) तीन-तीन भाषाओं में साहित्य प्रकाशन तथा वेद भाष्य गुजराती भाषा में, लेखन, देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार आदि कार्यों को पुरुषार्थ पूर्वक योगाभ्यास करते हुए सम्पादित कर रहे हैं।

श्रद्धेय स्वामी सत्यपति परिव्राजक, आचार्य ज्ञानेश्वरार्यः जी, उपाध्याय ब्र. विवेक भूषण दर्शनाचार्य (वर्तमान स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक), आचार्य आनन्द प्रकाश- आर्ष कन्या गुरुकुल सिकन्दराबाद, आचार्य अर्जुन देव वर्णी (दिल्ली), आचार्य जगद्देव नैष्ठिक (वर्तमान स्वामी ऋतस्पति), आचार्य वीरेन्द्र जी (गुजरात), आचार्य अभयदेव जी

शेष पृष्ठ 8 पर ☞

☞ पृष्ठ 7 का शेष

पूज्य स्वामी सत्यपति ....

(उड़ीसा), समादरणीय ब्र. सत्यप्रकाश जी, ब्र. अश्विनी, स्वामी आशुतोष जी आदि विद्वानों का हमें सान्निध्य क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविरों फरीदाबाद– दिनांक 16.09.90 से 26.09.90 तक, आर्यवन रोजड़–दिनांक 9.3.91 से 16.3.71, तपोवन आश्रम देहरादून– दिनांक 11.6.91 से 27.6.91 तक, आर्यवन रोजड़ – 26.3.92 से 9.6.92 तक तथा वेद मन्दिर इब्राहीमपुर दिल्ली आदि में प्राप्त हुआ। इन शिविरों में हमें योग के सूक्ष्म विषयों–ज्ञान–कर्म–उपासना, विवेक–वैराग्य–अभ्यास, ईश्वर प्रणिधान, स्व स्वामि सम्बन्ध, ईश्वर स्तुति–प्रार्थना–उपासना, क्रियात्मक योगाभ्यास, व्यक्तिगत उपासना (ध्यान), प्राणायाम, जप की विधि, आत्मनिरीक्षण, योग में विघ्न, शंका समाधान तथा योग दर्शन अध्ययन सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, आर्याभिविनय ऋषि प्रणीत ग्रन्थों का स्वाध्याय, संस्कृत भाषा का अध्ययन यज्ञ, वेदपाठ, व भाषणादि देने का प्रशिक्षण प्राप्त करने का सौभाग्य ईश्वर की महती कृपा से प्राप्त हुआ। परम श्रद्धेय गुरुवर्य श्री स्वामी सत्यपति परिव्राजक, पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः, सम्माननीय स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक व व्यवस्थापक समादरणीय ब्रह्मचारी श्री दिनेश कुमार जी का हमें सदैव आत्मिक स्नेह व आशीर्वाद प्राप्त हुआ। ईश्वर की सत्प्रेरणा से मुझे पूज्य गुरुवर्य की तपः स्थली आर्यवन, रोजड़ में संचालित "वानप्रस्थ साधक आश्रम" में साधना–स्वाध्याय –सेवा हेतु दिनांक 18/12/2010 से 28/12/2010 तक प्रवास करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आश्रम की दिनचर्या प्रातः 4 बजे जागरण मन्त्रोच्चारण ओं प्रातरग्निं...– आदि से प्रारम्भ होती है तथा रात्रि आत्मनिरीक्षण कक्षा के बाद 9.30 बजे शयनकालीन मन्त्रों ओं यज्जाग्रतो... आदि के साथ समाप्त होती है। आश्रम में आवास, यज्ञ प्रशिक्षण, आर्ष ग्रन्थों के पठन–पाठन, भोजन, दूध फलादि की उत्तम व्यवस्था है। प्रातः सायं 5.30 बजे से 6.30 बजे तक व्यक्तिगत उपासना (ध्यान) के लिए शान्त एवं प्रदूषण रहित स्वच्छ वातावरण में सुनहरा अवसर प्राप्त होता है। प्रातः 7.00 बजे से 8.00 बजे तक दर्शन योग महाविद्यालय एवं वानप्रस्थ साधक आश्रम में पृथक्–पृथक् यज्ञ, वेदपाठ, आर्याभिविनय ग्रन्थ स्वाध्याय का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। विद्यालय में पूज्य स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक आर्याभिविनय ग्रन्थ स्वाध्याय के बाद वैदिक संस्कृति से ओत–प्रोत राष्ट्रभक्ति परक प्रवचन देते हैं। विद्यालय में यज्ञोपरान्त अतिथि विद्वानों के प्रवचन व उनके सम्मान का कार्यक्रम भी रखा जाता है। तथा वानप्रस्थ साधक आश्रम में पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः का आध्यात्मिक प्रेरणादायक प्रवचन प्रतिदिन सुनने को मिलता है। आचार्य जी ईश्वर प्राणिधान विषय के बारे में बहुत अच्छी–अच्छी जानकारियाँ प्रदान करते हैं। यज्ञोपरान्त आचार्य जी के प्रवचन को जब मैं लिपिबद्ध करता था। तब मेरे इस कार्य को देखकर 90 वर्षीय साधिका माता सुषमा जी बहुत प्रभावित हुईं। पूज्या माता जी की स्वाध्याय–साधना–सत्संग के प्रति रुचि है। उन्होंने मेरी क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर आर्यवन रोजड़ की नोट बुक दिनांक 9/3/93 से 16/3/71 तक का स्वाध्याय किया। पूज्या माता जी ने मुझे "आयुष्मान्, तेजस्वी, वर्चस्वी" होने का आशीर्वाद प्रदान किया। दर्शनादि अध्ययन, सत्संग व आत्मनिरीक्षण की कक्षाओं में योगाभ्यासी भाग लेने हेतु आचार्य जी से अनुमति लेकर सम्मिलित हो सकते हैं। सायंकालीन सत्संग 7.15 बजे 8.00 बजे तक सम्माननीय वनप्रस्थी डॉ. बंसल जी एवं श्री रणसिंह आर्य जी के कुशल मार्ग निर्देशन में सम्पादित किया जाता है। सत्संग का प्रारम्भ गायत्री मन्त्र के भावार्थ– तूने हमें उत्पन्न किया...। के द्वारा ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना उपासना से किया जाता है। जप का अभ्यास– ओ३म् असतो मा सद्गमय। ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय। ओ३म् मृत्योर्माऽमृतंगमय। ओ३म् आनन्द आदि जप के वाक्यों तथा वेद मन्त्र–त्र्यम्बकं यजामहे० (ऋ०7/59/12) व अकामो धीरो अमृतः० (अथर्व० 10/8/44) के द्वारा अर्थ सहित (महर्षि पतञ्जलि के सूत्रानुसार– 'तज्जपस्तदर्थभावनम्–यो० द० 1/28) कराया जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती प्रणीत 'सत्यार्थप्रकाश' ग्रन्थ का स्वाध्याय साधक– साधिकाओं के द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इसमें माता उषा जी, माता डॉ. सरला जी, माता तारामणि जी, माता विमला जी, माता गुलाब देवी जी, माता जयाबेन जी व माता ज्योति जी आदि की सहभागिता रहती है। सभी साधक–साधिकायें सत्संग में उपस्थित रहकर अपनी आत्मिक उन्नति करते हैं। दि०24/12/2010 को साधकों के अनुरोध पर डॉ० बंसल जी ने सत्संग में मेरा भी भाषण रखा। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के राजधर्म विषय का सत्संग में स्वाध्याय चल रहा था। इसलिए मैंने 'सुखस्य मूलं धर्मः' विषय पर लगभग 15 मिनट व्याख्यान दिया। सत्संग के बाद सम्मानीय श्री डॉ० कृष्ण लाल डंग, श्री रण सिंह आर्य, श्री प्रताप जी, श्री उपाध्याय जी आदि ने कहा कि ब्रह्मचारी जी आज आपका असली परिचय हुआ है। माता श्रीमती डॉ० सरला जी डंग, माता जयाबेन पोरीया (यू.के.) व माता उषा जी बंसल आदि ने हमें प्रोत्साहित करने के लिये कहा कि 'आपका भाषण ओजस्वी व प्रेरणादायक' था। यू.के. से पधारी माता जयाबेन जो कि वहाँ पर YOGA INSTRUCTOR हैं, मेरे प्रति उनका हृदय से स्नेह हो गया। मेरे अध्ययनादि में वह काफी सहायता करती थीं। पूज्या माता जी ने मेरा संक्षिप्त जीवन परिचय भी लिख कर लिया तथा 'U.K. LEICESTER' की यात्रा के लिए निमन्त्रण भी दिया। सभी साधिका माताओं का मेरे प्रति पुत्रवत् व्यवहार रहता था। समय–समय पर फल व अन्य खाद्य पदार्थ प्रदान करती रहती थीं।

रात्रि 8.15 बजे से 8.30 बजे तक सामूहिक भ्रमण (श्लोक–मन्त्र गायन) विद्यालय के ब्रह्मचारी एवं आश्रम के साधक–साधिकायें साथ–साथ करते हैं। रात्रि 8.30 बजे से 9.00 बजे तक आत्मनिरीक्षण कक्षा में पूज्य स्वामी ध्रुव देव जी ने ईश्वर–जीव–प्रकृति, मनोनियन्त्रण, निदिध्यासन, व्यवहार काल में यम–नियमों का अनुष्ठान, अविद्या का स्वरूप, ईश्वर प्राणिधान, मुक्ति विषय, परिणाम–दुःख, ताप दुःख, संस्कार दुःख, गुणवृत्ति विरोध दुःख, न्याय दर्शन की पञ्चावयव प्रक्रिया से ईश्वर सिद्धि, मौन का महत्त्व, स्वाध्याय, सन्ध्योपासना आदि विषयों के बारे में अल्पकाल में पर्याप्त ज्ञान–विज्ञान प्रदान किया।

आश्रम प्रवास के समय दिनांक 19/12/2010 को प्रातःकाल जब 9.30 बजे आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः से मिलने गया तब आचार्य जी कहने लगे कि मुझसे मिलने आये हो या परमात्मा से मिलने आये हो। आचार्य जी वार्ता के समय कहने लगे कि आपका सुलेख अच्छा है, God Gifted है। आचार्य जी ने हमसे पूछा कि स्वामी जी से मिले हो तब मैंने कहा कि कल प्रयास किया था परन्तु स्वामी जी की अस्वस्थता के कारण भेंट नहीं हो सकी थी। आज पुनः मिलने जाऊँगा। पूज्य स्वामी जी महाराज की अनुमति से जब उनके दर्शनार्थ एवं आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए उनके समीप जाकर चरण स्पर्श किये तब देखा कि गुरुवर्य अस्वस्थता की हालत में भी प्रसन्न मुद्रा में थे। अपने दोनों हाथों द्वारा हृदय से हमें अपना ढेर सारा मुहुर्मुहुः आशीर्वाद प्रदान किया तथा हमसे कहने लगे कि अब कानों से सुनाई नहीं पड़ता है। मेरी स्मृति पटल पर तुरन्त भर्तृहरि का श्लोक याद आ गया–

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो,
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,
संदीप्ते भवने तू कूपरवननं प्रत्युद्यमः कीदृशः।।

आचार्य जी ने हमसे यह भी पूछा कि किस कुटिया में तुम्हारी साधना के लिए व्यवस्था की गई है। तब मैंने बतलाया कि कुटिया संख्या 104 जो कि AC, गीजर आदि आधुनिक सुविधाओं से युक्त थी। आचार्य जी ने हमें यह भी निर्देश दिया कि यू.के. से माता जयाबेन जी साधना–स्वाध्याय–सेवा के लिए आयी हैं वह कुटिया संख्या 103 में रह रही हैं, उनसे भेंट कर लेना। आचार्य जी के आदेशानुसार मैंने सम्माननीया माता जयाबेन जी से भी मुलाकात की। माता जी विनम्र स्वभाव, विशाल हृदय व ऋतम्भरा प्रज्ञा की योग साधिका हैं। उनका आचार–विचार, रहन–सहन उपनिषद् ऋषिका ब्रह्मवादिनी विदुषी मैत्रेयी के सदृश हमें समझ में आया।

वर्तमान समय में पूज्य स्वामी सत्यपति जी की सेवा सुश्रूषा आचार्य सत्येन्द्र जी– आर्ष गुरुकुल अजमेर (राज०) तथा ब्रह्मचारी नवीन जी कर रहे हैं। स्वामी जी की सेवा के लिए उनके शिष्य पूज्य आचार्य जी से अनुमति प्राप्त कर समय–समय पर आते रहते हैं। आचार्य श्री सत्यजित् जी–आर्ष गुरुकुल–ऋषि उद्यान, अजमेर (राज०), श्री आशीष जी दर्शनाचार्य–तपोवन आश्रम– देहरादून आदि भी गुरुवर्य की सेवा में रह चुके हैं। रोजड़ की पवित्र भूमि में 25 अप्रैल 2009 को विश्व प्रसिद्ध योग गुरु तथा पतञ्जलि योग पीठ हरिद्वार के संस्थापक श्रद्धेय स्वामी रामदेव जी महाराज योगिराज स्वामी सत्यपति जी के दर्शनार्थ पधारे तथा गुरुवर्य से आशीर्वाद प्राप्त किया। तथा विद्यालय व आश्रम की गतिविधियों का सूक्ष्मता से अवलोकन किया। आचार्य जी ने भारतीय 'अतिथि–देवो भव' की परम्परा का निर्वहन करते हुए योग ऋषि स्वामी रामदेव जी का स्वागत व अतिथि सत्कार किया।

वानप्रस्थ साधक आश्रम में आचार्य कक्ष के साथ 32 साधक कुटियाओं (लगभग 300 वर्ग फुट) की व्यवस्था है। जिसमें एक कमरा, रसोई, स्नानागार, शौचालय, बरामदा, दो पलंग, आलमारी, मेज कुर्सी, पंखा, दीवाल घड़ी, एल पी जी गैस चूल्हा, गीजर आदि की व्यवस्था है। कमरे के अन्दर महर्षि दयानन्द सरस्वती, योगिराज श्री कृष्णचन्द्र जी महाराज व वानप्रस्थ साधक आश्रम का नववर्ष कैलेण्डर उचित स्थान पर लगाये गये हैं। कुटिया में आवश्यक सामान जो उपलब्ध कराये गये हैं उसका सूची पत्र तथा

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

नारी के अतीत व वर्तमान का सामाजिक व चारित्रिक स्वरूप

● पं. उम्मेद सिंह विशारद

आर्य समाज के संस्थापक, महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने नारी की शिक्षा व उच्च चरित्र पर बहुत बल दिया है। उन्होंने अपने ग्रन्थों में स्पष्ट किया है कि नारी परिवार व समाज की रीढ़ की हड्डी होती है और परिवार, समाज व राष्ट्र में नारी की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। नारी का रहन–सहन, पहनावा व वेशभूषा तथा संस्कारों का समाज पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

आर्यसमाज ने अपने जन्म काल में नारी शिक्षा सुधार में महत्वपूर्ण कार्य किया है। शोषित व ताड़ित नारियों के उज्ज्वल भविष्य के लिये आर्य समाज ने पहल फलस्वरूप आज के युग में नारी प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के बराबर कार्य कर रही है। आज की नारी राष्ट्रपति तक के पदों को शोभित कर रही है। राजनीति, विज्ञान, शिक्षा व सामाजिक क्षेत्र में नारी ने अपना परचम लहराया है। यह सब आर्य समाज की नारी के प्रति पहल करके शिक्षा का प्रभाव है।

आज आर्य समाज बहुत चिन्तित है कि वर्तमान में समाज का चरित्र नारी के प्रति क्यों गिर रहा है। क्यों घृणित बलात्कार करके मानवता को शर्मसार कर रहे हैं। अबोध बालिकाओं तक का बलात्कार हो रहा है। क्यों समाज का इतना नैतिक पतन हो रहा है, इस विकट समस्या पर हमें गम्भीरता से विचार करना पड़ेगा और सुधार के लिये आर्य समाज को आन्दोलित होना पड़ेगा। कुछ अतीत, मध्य व वर्तमान में नारी की समस्या पर विचार करते हैं।

वैदिक युग में नारी की स्थिति : वैदिक युग में नारी की बहुत ऊँची स्थिति थी, परिवार में नारी को देवी कहा जाता था। अथर्ववेद में कुल वधु को सम्बोधित करके कहा गया है–

साम्राज्ञी एधि श्वमुरेषु सम्राज्ञी उत देवृषु।
ननान्दुः सम्राज्ञी एधि सम्राज्ञी उतश्वश्रुवाः।।

अर्थात: हे कुलवधू तू जिस नवीन घर में जाने वाली है तू वहाँ की सम्राज्ञी है, वहां तेरा राज होगा। तेरे श्वसुर, देवर, ननदे और सास तुझे सम्राज्ञी समझेंगे।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः जहाँ नारियों को सम्मान व पूजा होती है वहाँ देवता रमते हैं वैदिक युग में नारियों को ऊँची शिक्षा दी जाती थी। नारियों में उच्च संस्कार, आत्मरक्षा, पतिव्रत धर्म, सदाचार, पवित्रता, शालीनता, सहनशीलता नारी सुलभ लज्जा आदि के विशेष गुण थे। यही कारण है कि वैदिक युग में नारी ऋषिकाएं तथा शास्त्रार्थ महारथी हुई थीं और सम्पूर्ण मानव समाज में एक उच्च चरित्र की आदर्श संहिता थी। नारी–पुरुष दोनों अपनी मर्यादा में रहते थे।

वैदिक युग में कन्या का विवाह युवावस्था में होता था, वैदिक काल का विवाह स्वयंवर के सिद्धान्त पर आश्रित था। स्वयंवर का अर्थ है– स्वयं अपने आप वरण करना और स्वयंवर का अधिकार कन्या को दिया जाता था, वर कन्या को माला नहीं पहनाता था, कन्या जिस वर के प्रति स्वीकृति देती थी उसके गले में वह माला डालती थी। सीता–स्वयंवर हुआ, द्रोपदी का स्वयंवर हुआ अन्तिम स्वीकृति कन्या की थी वर की नहीं थी। वैदिक युग में दहेज जैसी कोई बात नहीं थी किन्तु विवाह के समय कन्या के माता– पिता वर को कुछ वस्त्र, कुछ आभूषण देते थे ताकि वह गृहस्थी चला सके। विवाह के समय वर को गौ देते थे ताकि उन्हें दूध–दही मिल सके, अगर वैदिक युग में कन्यापक्ष की तरफ से कुछ दिया जाता था तो गौ तथा अलकृंत कन्या। इस प्रकार वैदिक युग में नारी का स्थान बहुत ऊँचा था।

मध्य युग में नारी की स्थिति : मध्य युग के आते–आते नारी के प्रति दृष्टिकोण बदल गया और इतना बदला कि स्त्री की पूर्ण अधोगति का युग था। इस युग में स्त्री को मौलिक व सामाजिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया था।

स्त्री शूद्रौ नाधीयताम् : यह कहा जाने लगा। तुलसीदास ने तो यहाँ तक लिख डाला कि ढोल, गंवार, शूद्र, पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी–स्त्री को गंवार मूर्ख गिना जाने लगा, स्त्री को लूट का अंग माना जाने लगा और कन्याओं को अपहरण से बचाने के लिए घर के भीतर छिया कर रखा जाने लगा। ऐसी हालत में शिक्षा कहाँ हो सकती थी। कन्याओं का अशिक्षित रहना समय की मांग हो गयी। कहा जाता है कि मुसलमानों के आक्रान्ता के रूप में भारत आने से बाल विवाह की प्रथा चल पड़ी और छोटे बच्चे बच्चियों का विवाह होने लगा। इस प्रकार दहेज की प्रथा भी बढ़ गयी जो जितना अधिक दहेज देता था कन्या को उतना ही सुची माना जाता था।

भारत के मध्यकालीन युग में स्थिति बहुत बदल गयी, समाज में नयी–नयी समस्याएं उत्पन्न हो गयीं। अगर किसी स्त्री के पति का देहान्त हो जाए तो भारत में उसके सामने दो मार्ग थे– या तो आजीवन विधवा रहे या पति के साथ चिता में भस्म हो जाए। इस काल में सती प्रथा के काल तक विधवाओं की जो दुर्दशा की जाती रही वह बहुत भयंकर काल था। विधवा होते ही नारी का सिर मूंड दिया जाता था। लज्जा के मारे वह बाहर नहीं निकल सकती थी। उसे अपशकुन का कारण समझा जाने लगा। विधवा के लिए ऐसी विकट स्थिति पैदा की जाती थी। उसके सामने सती होना ही एक मार्ग रह जाता था।

इस प्रकार नारी जाति के ऊपर मध्ययुग में उत्पीड़न, शोषण, अत्याचार, अन्याय, अपमान व केवल भोग की वस्तु समझ कर सर्वाधिक अतयाचार हुआ।

वर्तमान युग में स्त्री की स्थिति : आज की नारी ने अपने पिछले बन्धनों को तोड़ दिया है। वह हर क्षेत्र में पुरुषों के स्तर पर आ रही है। अंग्रेजों का शासन आया। 1823 में अंग्रेजी शासन ने एक कमेटी बनायी जिसका उद्देश्य इस देश में शिक्षा का प्रचार करना था। 1835 में लार्ड मैकाले को भारतीय शिक्षा पर विचार करने वाली सोसायटी का सदस्य बनाया गया। उसने यह निश्चित मत व्यक्त किया की भारत में ऐसी शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात करना उचित है जिससे भारतीय वेषभूषा में तो भारतीय हों किन्तु अन्दर में अंग्रेज हो और इस योजना पर लार्ड मैकाले बहुत सफल रहा है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण वर्तमान में दिखाई दे रहा है। इसका परिणाम यह हुआ कि कन्याओं को घर की चार दीवारी से निकल कर शिक्षा प्राप्त करने का वैसा ही अवसर प्राप्त होने लगा जैसे युवकों को प्राप्त हो रहा था और लड़कों के साथ–साथ लड़कियों के स्कूल–कॉलेज भी खोले जाने लगे।

सन् 1977 से सरकार ने कन्या के लिये 18 वर्ष व वर के लिए 21 वर्ष आयु विवाह के लिए कर दी है। इससे भी कन्याओं को शिक्षा का अवसर मिलने लगा। नारी के सामाजिक विचारों व संस्कारों में वैदिक युग व मध्ययुग की तुलना में अधिक स्वतन्त्र विचार धारा बनने लगी। परिणाम स्वरूप नारी ने जहां पुरुषों की हर क्षेत्र में बराबरी की है वहीं कहीं न कहीं अपनी नारी सुलभ लज्जा का परित्याग भी किया है। पाश्चात्य संस्कृति व सभ्यता की अन्धी दौड़ में नारी ने अपने संस्कारों के उच्च आदर्शों की बलि देने में कोई कसर नहीं छोड़ी। सिनेमा जगत में, क्लबों में आदि आदि जगहों पर नारी अर्धनग्न रूप में अपने शरीर का प्रदर्शन कर रही है। सिनेमाओं में देखने में, आता है कि पुरुष तो पूरे कपड़े पहना होता है पर नारी के वस्त्र आधे होते हैं। समाज पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। ऐसा लगता है सामाजिक संस्थाए भी इसे मौन रूप से देख रही हैं। महिला संगठन इस पर कुछ नहीं कहते हैं।

नारी का अति स्वतन्त्र होना, नारी की मर्यादाओं से बाहर जाना है इस पर विचार करना होगा। अर्धनग्न प्रदर्शन को रोकने के लिए सरकार को सख्त कानून बनाना चाहिए। शिक्षा क्षेत्र में कालेज व स्कूलों में लड़कों व लड़कियों का अलग–अलग स्कूल होना चाहिए। पाश्चात्य संस्कार वैलेन्टाइन पर भी प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

दहेज के दुष्परिणामों का मुकाबला करने के लिए सामाजिक संस्थाओं व कानून द्वारा सख्ताई से पालन करना होगा। आर्य समाज व अन्य संस्थाओं ने इस दिशा में बहुत कार्य किया है। 1959 में दहेज निरोधक अधिनियम भी पास हो चुका है जिसके अनुसार दहेज माँगने वाले को 6 मास की सजा व 5 हजार रुपये जुर्माना किया जा सकता है। इसी प्रकार विधवा की स्थिति में भी कोई मान्यता प्राप्त परिवर्तन नहीं हुआ है।

अन्त में सरकार से, सामाजिक संगठनों से, राजनेताओं से, महिला संगठनों से, शिक्षाविदों से व सामान्य महिलाओं से विनम्र निवेदन है कि वर्तमान में चरित्र हनन की जो भी घटनाएं हो रही हैं इसको समाज के संस्कारों में छोटा न समझें। अगर इस विकट समस्या पर हम जागरूक नहीं हुए तो कालान्तर में ये समस्या कैंसर (लाइलाज) बन सकती है। केवल कानून बनाने से ही समस्या का समाधान नहीं होगा। हमें समस्या के मूल की तह तक जाना होगा। विशेष करके आर्य समाज जैसे जागरूक संगठन को इसमें आगे आना होगा।

(प्रोफेसर सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार जी द्वारा लिखित पुस्तक वैदिक संस्कृति के आधार पर)

वैदिक प्रचारक उत्तराखण्ड
गढ़निवास, मोहकमपुर, देहरादून

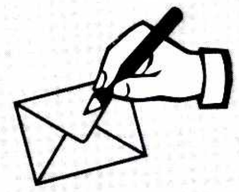

पत्र/कविता

समय की पुकार और आर्यों का कर्त्तव्य

आर्य समाज के भविष्य के सम्बन्ध में प्रश्न एठता है कि यह आशामय है या अन्धकारमय। आर्य समाज की बाह्य स्थिति देखकर तो आशा की किरण जगती है, पर आन्तरिक स्थिति देखकर निराशा होती है। किसी नवागन्तुक को आन्तरिक स्थिति देखकर घोर निराशा होती है और पीछे हट जाता है।

हमारा बाह्य रुप सुन्दर व आकर्षक है। अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों में लाखों की उपस्थिति और सुन्दर व्यवस्था और सारगर्भित भाषणों की गंगा का प्रवाह देख कर मन हर्षित होता है और आर्य समाज के उद्देश्य पूर्ति का आभास होता है, महर्षि का ऋण उतारने का विश्वास जगता है।

पर इस सबकी पृष्ठभूमि में हम कहाँ खड़े हैं, यह विचारने पर निराशामयी आह ही अन्तर से निकलती है। अपने को समझदार व उत्तरदायी मानने वाले आर्य समाजी कहते हैं कि हम तो शान्ति प्रिय आर्य हैं। झगड़ों व कलह से हमें कोई सरोकार नहीं है। पर वास्तव में वे कहीं न कहीं कलह में उलझे होते हैं, और वहाँ से सत्यासत्य के निर्णय के समय पर परे हट जाते हैं। अपना सत्य पक्ष भी दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत नहीं कर पाते, परिणामतः असत्य पक्ष हावी हो जाता है।

ये शान्ति प्रिय सज्जन भूल जाते हैं कि महर्षि भी यदि ऐसी कायरतामयी शान्ति को अपनाते, तो भारत में क्रान्ति कैसे जगती? महर्षि के द्वारा जगाई हुई क्रान्ति के बल पर ही तो हम गर्व से सिर ऊँचा किये आर्य समाज का गुणगान कर रहे हैं और गौरवान्वित हो रहे हैं और उसी क्रान्तिमयी नीति को हम ''कलह'' का नाम देकर पीछे हट रहे हैं।

याद रखें आर्य समाज के क्रान्तिकारी स्वरूप ने ही राष्ट्र को जगाया था और भविष्य में जगायेगा भी और राष्ट्र की रक्षा में हमें सशक्त बनायेगा। आर्यो! महर्षि के इस क्रान्तिकारी सन्देश को याद रखो, क्रान्ति का आह्वान लेकर क्षेत्र में आओ, कूद पड़ो। राष्ट्र की समस्याएँ तुम ही सुलझा सकोगे, आर्य समाज के सिवा किसी में यह दम नहीं, साहस नहीं। महर्षि की अन्तरात्मा तुम से आस लगाए है।

डॉ. कु. पुष्पावती,
डी. 45/129, नई बस्ती, रामापुरा
वाराणसी– 221010 (उ.प्र.)

****

उपदेश को सार्थक बनाएं

"सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि"

हम '**श्रुतेन**' जो सुने ज्ञान, उपदेश, शास्त्र, श्रुतिवाणी।
जो परमेष्टि परमइष्ट की हो साधक, कल्याणी।।
उससे हम '**संगमेमहि**'–संगत हो यूँ जुड़ जाएं।
कि वे अपनी जीवन चर्या का हिस्सा बन जाएं।।

उनका पालन करें, आचरण में लाएं अपनाएं।
जिससे हम कल्याण मार्ग पर अविरत बढ़त जाऐं।।
हे प्रभु! हमे '**श्रुतेन**' सुने उन शुचि सद् उपदेशों से।
'**मा निराधिषि**' मत वियुक्त करना श्रुति निर्देशों से।।

ये ही श्रुति निर्देश (और उपदेश) बनेंगे जब जीवन निर्माता।
तो ही तो जुड़ पायेगा उस परमपिता से नाता।
जिसे प्राप्ति के हेतु मिली है हमको ये नर देही।।
परम दयामय, करुणा वरुणालय की करुणा से ही।।

सभी आप्तजन, वेदविज्ञ, विद्वान और उपदेशक।
उसकी ही श्रुति वाणी के कल्याण काय संप्रेषक।।
बनकर, हम अज्ञान ग्रस्त, भटकों को राह बताते।
जिससे श्रुति सदपथ अपना हम उद्‌विकास कर पाते।।

अस्तु प्रभो! इस जीवन पथ के फिसलन मय जगमग में।
रहें बने शुचि श्रुति उपदेशक सद् पथ दर्शक संग में।।
जिससे कर पुरूषार्थ सार्थ, परमार्थ मोक्ष सुख पाएं।
अपने '**सयुज सखा**' से मिलकर जीवन सफल बनाऐ।।

दयाशंकर गोयल
1554डी सुदामा नगर इन्दौर
पिन–452009 (म.प्र.)

थोड़ा सपना सा लगता है कभी-कभी

आर्य समाज जहाँ गया। वहाँ यज्ञ गया, हिन्दी गयी, महर्षि दयानन्द गये, वेद का आगमन हुआ। आर्ष ग्रन्थ पहुंच ही गया। पताका भी पाखण्डों का खण्डन करते पहुँची। हमारे टापू मे भी ये मेहमान आये। समाज बांधे गये, हिन्दी भाषा में बातचीत होती थी। टूटी–फूटी ही सही। सायंकालीन पाठशाला चालू। चार बजे से लड़के पाठशाला से लौटकर पाटी लेकर जाते थे। युवा वर्ग रात्रि में, लड़कियाँ घर पर ही शिक्षा पाती थीं। बाल शिक्षा पुस्तिका का प्रयोग पाठशाला में अध्यापक करते थे। घर पर माता–पिता। संध्या हवन तो अनिवार्य होता था। समय के साथ कुछ धार्मिक और साहित्यिक परीक्षाएं भी आरम्भ हुईं। विद्यार्थी दिलचस्पी दिखाकर पढ़ने लगे। यज्ञपर पूर्ण विश्वास था। परीक्षा तिथि निकट आती थी तो पढ़ाई जोर पकड़ती थी। परीक्षा से एक दिन पहले हवन करते थे। तब दूसरे दिन परीक्षा में बैठते थे। परीक्षा उत्तीर्ण होने पर भी हवन करते थे। अबकी बार पास–पड़ोस के लोग और समाज के लोग भी आमंत्रित होते थे। पंडित जी आते थे। गुरुजी आते थे। यज्ञ हवन होता था। विद्यार्थी उत्तीर्ण होने पर भी हवन करते थे। उत्तीर्ण विद्यार्थी को बधाई दी जाती थी।

उस समय बिजली नहीं होती थी। लालटेन जलाकर काम निकालते थे। कमरे छोटे–छोटे होते थे। बरामदा होता था। उसी में चटाई बिछाकर बैठते थे। आज के समान कुर्सी नहीं होती थी। घर गोबर माटी से लिपा होता था। घर के बीच मिट्टी खोदकर कुण्ड बनाते थे। उसी में यज्ञ होता था। इस जुटाव मे एक प्रधान एक मंत्री की नियुक्ति होती थी। छोटी मेज और एक दो कुर्सी का प्रबन्ध प्रधान–मंत्री के लिए होता था। हवन से पहले प्रधान–मंत्री जी अपनी बात बोलते थे। खुशी जाहिर करते थे। भोजन का प्रबन्ध नहीं होता था। यज्ञ भी छः–सात बजे रात्रि में ही होता था। यज्ञ के पश्चात् चाय और प्रसाद का प्रबन्ध होता था। आटा भूनकर परसादी बनायी जाती थी। हर घर में गाय होती थी। कार्यकर्ता सवेरे घूम कर दूध इक्ट्ठा कर लेता था। परसादी बनती थी और चाय में डालते थे। ज्यादातर कटोरी मे चाय बाँटी जाती थी। परसादी भी दोने में नहीं देते थे। पहले कागज का टुकड़ा बाँटते थे। बाद में थाली में परसादी लेकर हाथ से बाँटते थे। चाय भी स्वादिष्ट होती थी। चाय की पत्ती, अदरक, सौंफ, इलायची आदि डालकर बनायी जाती थी। छोटी–छोटी परीक्षाओं में उत्तीर्ण बच्चों की बड़ी इज्जत होती थी। समाज में अपने बड़ों के साथ जाते थे। जुटाव शान्ति में होता था। विद्यार्थियों के लिए छूट थी वे घर पर रहकर पढ़ाई करते थे। शान्ति भोजन के बाद माता–पिता बच्चों के साथ बैठते थे। चटाई पर ही बैठना होता था। लालटेन ज़मीन पर रखकर या एक कुर्सी पर रखकर काम चलाते थे। आर्य परिवार के बच्चे सोने से पहले और सवेरे जागने पर बड़ों को नमस्ते करते थे। आज के चंचल जगत् में थोड़ा सपना सा लगता है कभी–कभी। काश वह समय आज भी वैसे ही रहता तो–।

सोनालाल नेमधारी
कारोलिनश बेलपुर, मोरिशस

****

☞ पृष्ठ 6 का शेष

यज्ञोपवीतमसि...

भी अर्थ करूँ, फिर भी कुछ छूट ही जायेगा। फिर भी मैं अपनी अल्पमति के अनुसार प्रयास करूँगा।

'**यज्ञोपवीतम्**' देवपूजा, संगतिकरण और दान का बोधक तथा ईश्वर प्राप्ति का माध्यम यह यज्ञोपवीत,

'**परमं पवित्रम्**' परम पवित्र है, श्रेष्ठतम है। यह '**परमं**' अर्थात् अंधकार से परे ले जाने वाला है। यह '**पवित्रम्**' अर्थात् शुद्ध करने वाला, सतोगुण को बढ़ाने वाला है तथा मल, विक्षेप और आवरण को नष्ट करने वाला है।

'**प्रजापतेः**' जो प्रजा अर्थात् इन्द्रियों के स्वामी आत्मा को '**सहजं परस्तात्**' अत्यन्त सहज रूप में '**परस्तात्**' श्रेष्ठता की ओर ले जाने वाला है। आध्यत्मिकता के चरम शिखर पर पहुँचाने वाला है।

'**आयुष्यम्**' यह यज्ञीय भावना में निरत साधक को आयु को बढ़ाने वाला है ताकि वह और भी शुभ कार्य कर सके। '**अग्रयम**' यह आत्मा को आगे बढ़ाने वाला है। मोक्ष के द्वार तक पहुँचाने वाला है।

'**प्रतिमुंच**' यह बन्धनों से मुक्त करने वाला है, क्लेशों को दूर करने वाला है। '**शुभ्रम्**' सफेद वर्ण वाला, सतोगुण प्रधान, ज्ञानवर्द्धक, निर्मल विचारों का पोषक '**यज्ञोपवीतम्**' तीन सूत्रों में गुंथा हुआ यह जनेऊ मेरे जीवन में '**बलमस्तु तेजः**' शारीरिक बल और आत्मिक तेज प्रदान करे।

शिष्य : आपने बहुत सुन्दर व्याख्या की है। कृपया दूसरे मंत्र की भी व्याख्या कर दीजिए।

गुरु : सुनो, शिष्य का उपनयन संस्कार करते हुए आचार्य या गुरु ब्रह्मचारी से कहता है– '**यज्ञोपवीतमसि**' (यज्ञ + उप + वीतं + असि) हे शिष्य तू अपने गुणों के कारण यज्ञ अर्थात् श्रेष्ठ कर्म करने तथा ईश्वर आराधना का अधिकारी है।

'**त्वा**' अतः तुझको

'यज्ञस्य' श्रेष्ठतम कर्म करने तथा ईश्वर प्राप्ति हेतु '**यज्ञोपवीतेन**' तीन सूत्रों से बने हुए इस यज्ञोपवीत को 'उपनह्यामि' पहनाता हूँ या धारण कराता हूँ

शिष्य : गुरुजी, आपका बहुत–बहुत धन्यवाद। मैं आज ही इसी पल यज्ञोपवीत धारण करूँगा।

230 आर्य वानप्रस्थ आश्रम,
ज्वालापुर (हरिद्वार)

☞ पृष्ठ 8 का शेष

पूज्य स्वामी सत्यपति ....

आगन्तुक साधकों की सुविधा के लिए वानप्रस्थ साधक आश्रम नियमावली के पत्रक भी लगाये गये हैं जिससे मौन का पालन, यज्ञादि में समय से भाग ले सकें। 500 साधकों की क्षमता वाला भूमिगत ध्यान कक्ष (110x40 फीट), विशाल सत्संग भवन हाल, 51000 लीटर क्षमता वाला ओवर हेड टैंक, पक्षी घर, 20 अतिथि प्रकोष्ठ, पाकशाला, भोजनशाला, चिकित्सालय का निर्माण कार्य हो चुका है। तीन तलों में 9 कुण्डों वाली विश्व की प्रथम प्रशिक्षण यज्ञशाला का निर्माण कार्य पूर्णता की ओर है। यज्ञशाला में अब तक 40 लाख रुपये निर्माण कार्य में व्यय किये जा चुके हैं। लगभग 20 लाख रूपये मार्बल, कारपेट आदि फिनिशिंग कार्य में लगने की संभावना है। आश्रम के निर्माण कार्य में अब तक 5 करोड़ रुपये व्यय हो चुके हैं। आश्रम परिसर में नीम, पीपल, आंवला, चीकू तथा अन्य फलदार वृक्ष 4000 की संख्या में एवं गुलाब, बेला, रातरानी, तथा मौसमी फूल–पौधे पर्यावरण की शुद्धि के लिये लगाये गये हैं और लगाये जा रहे हैं। आश्रम में स्वच्छता रहने के कारण मच्छर आदि नहीं हैं। विद्युत् एवं पानी की 24 घण्टे व्यवस्था है। फिल्टर का शुद्ध पानी एवं वस्त्र साफ करने के लिए वाशिंग मशीन की सुविधा उपलब्ध है। नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः ने मार्गशीर्ष पूर्णिमा विक्रम संवत् 2067 तदनुसार 21 दिसम्बर 2010 को प्रातःकाल 7.00 बजे से 8.30 बजे तक साधक–साधिकाओं के साथ सर्वकल्याण ार्थ यज्ञ सम्पादित कर सम्पन्न किया। यज्ञोपरान्त आचार्य जी ने सभी को लगभग 250 ग्राम सूखे मेवों का पैकेट प्रसाद के रूप में वितरित करवाया।

दर्शन योग महाविद्यालय तथा वानप्रस्थ साधक आश्रम रोजड़ द्वारा वैदिक धर्म से सम्बन्धित अनेक भाषाओं में 1 करोड़ 40 लाख से अधिक लागत मूल्य वाले 100 से भी अधिक छोटे–बड़े ग्रन्थों का सुन्दर तथा आकर्षक साज–सज्जा के साथ प्रकाशन एवं वितरण किया गया है। जिसमें गुजरात प्रान्त को राष्ट्र के समक्ष MODEL के रूप में प्रस्तुत करने के लिए तत्पर माननीय मुख्य मंत्री श्री नरेन्द्र भाई जी मोदी द्वारा यजुर्वेद भाष्य (गुजराती) का विमोचन पूज्य आचार्य श्री ज्ञानेश्वरार्यः, अग्निपथ के सम्पादक श्री अरविन्द भाई राणा, ब्रह्मचारी दिनेश कुमार आदि की उपस्थिति में सम्मिलित है।

दर्शन योग महाविद्यालय एवं वानप्रस्थ साधक आश्रम के संस्थापक एवं निर्देशक पूज्य स्वामी सत्यपति जी की तपःस्थली रोजड़ में अब तक लगभग 40 योग शिविरों का आयोजन सफलता पूर्वक हो चुका है। देश भर के 20 प्रान्तों में तथा विदेशों में 350 से अधिक क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया गया है। 30 से अधिक क्रियात्मक यज्ञ–प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन तथा 6000 याज्ञिक परिवारों का निर्माण। प्रतिवर्ष किशोर चरित्र निर्माण का आयोजन, कॉलेज के युवकों के लिए 'श्रेष्ठता और सफलता' शिविर का आयोजन कालेज की युवतियों के लिए 'सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास शिविर' आयोजन, देशभर में आर्ष प्रणाली से पढ़ने वाले ब्रह्मचारियों तथा ब्रह्मचारिणियों को छात्रवृत्ति एवं सहयोग प्रदान किया जाता है। प्रतिवर्ष सैकड़ों परिवारों में यज्ञ–सत्संग, शंका– समाधान व प्रेरक प्रवचन। भूकम्प, बाढ़ इत्यादि प्राकृतिक प्रकोपों में अन्न, वस्त्र, चिकित्सा आदि के रूप में सहयोग। निकटस्थ निर्धन परिवारों में से किसी की मृत्यु होने पर वैदिक–विद्वानों को घी, हवन सामग्री, समिधा सहित भेजकर अन्त्येष्टि संस्कार सम्पन्न करवाये जाते हैं। उपर्युक्त अति संक्षेप में पूज्य स्वामी जी द्वारा रोजड़ में संचालित संस्थाओं की गतिविधियों का वर्णन किया है।

अतः जिस किसी के भी मन में योगाभ्यास द्वारा ईश्वर साक्षात्कार व मोक्ष सुख प्राप्ति की अभिलाषा हो, प्राचीन दर्शनों की विद्या पढ़ने की जिज्ञासा हो, साधना–स्वाध्याय–सेवा की इच्छा हो तथा युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के सपनों को साकार करने के लिए वैदिक धर्म–संस्कृति का देश–विदेश में प्रचार करने का संकल्प हो तो मेरे विचार से उसे एक बार कम से कम प्रेरणा के लिए पूज्य गुरुवर्य श्री स्वामी सत्यपति परिव्राजक की आदर्श तपःस्थली रोजड़ जाकर अपनी आत्मा को विद्या एवं तप द्वारा अवश्य पवित्र बनाने का प्रयास करना चाहिए।

नातपस्विनो योगः सिध्यति।

–आर्य समाज शक्तिनगर
जनपद–सोनभद्र (उ०प्र०)
चालभाष–9450951946

चुनाव समाचार

1 आर्य समाज, नकुड, जिला सहारनपुर उ०प्र०

प्रधान	श्री अमरीश कुमार गोयल
मन्त्री	श्री भूपेन्द्र कुमार आर्य
कोषाध्यक्ष	श्री डॉ. शिव कुमार
पुस्तकालयाध्यक्ष	श्री डॉ ललित कुमार शर्मा

2 आर्य समाज माडल टाउन, पानीपत, हरियाणा

प्रधान	श्री इन्द्र मोहन आहूजा
मन्त्री	श्री चमन लाल आर्य
कोषाध्यक्ष	श्री शिव नारायण कौशिक

3 आर्य समाज पटेल नगर, सेक्टर–15, गुड़गांव, हरियाणा

प्रधान	श्री पद्मचन्द आर्य
मन्त्री	श्रीमती निर्मला चौधरी
कोषाध्यक्ष	श्री वेद प्रकाश मनचन्दा

4 आर्य समाज राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली

प्रधान	श्री अशोक सहगल
मन्त्री	श्री सतीश चन्द्र मेहता
कोषाध्यक्ष	श्री सतीश कुमार

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 10-11/07/2013
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

शान्ति यज्ञ तथा पर्यावरण एवं सन्तुलित विकास

आर्य समाज एवं आर्य युवा समाज डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सैक्टर-14 फरीदाबाद की ओर से उत्तराखंड में आई भारी आपदा व तवाही के दृष्टिगत आज दिनांक 05-07-2013 शुक्रवार को विद्यालय के सभी छात्र-छात्राओं व शिक्षकों की ओर से एक शान्ति यज्ञ व ''पर्यावरण एवं संतुलित विकास'' इस विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें विद्यालय के बच्चों तथा शिक्षकों ने बड़ी ही श्रद्धा व तन्मयता के साथ यज्ञ में आहुतियाँ डाली तथा विशेष वेद मंत्रों द्वारा दिवंगतों की आत्मा की सद्गति तथा जीवित वचे लोगों के स्वस्थ्य व लाभ हेतु प्रार्थना की।

तत्पश्चात् कक्षा सातवीं के बच्चों के द्वारा उत्तराखण्ड में आई इस दैवीय आपदा में विस्तृत आंकड़ों द्वारा मृतकों तथा घायलों की जानकारी दी गई। पुनः इस तरह की दैवीय आपदा के भौगोलिक कारणों का वर्णन करते हुए बच्चों ने पहाड़ों तथा नदियों के ऊपर व किनारों पर होने वाले निर्माण कार्यों को जिम्मेदार माना। साथ ही वृक्षों की अन्धाधुन्ध कटाई से पहाड़ों का कमज़ोर होना कारण बताया।

अन्त में विद्यालय के प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी ने बच्चों को प्रोत्साहन देते हुए प्रकृति को सन्तुलित करने तथा उसका दोहन न करने की शिक्षा दी। उन्होंने प्रकृति को माता की तरह आदर देने और उसी के संरक्षण में रहकर अपना जीवन चलाने की प्रेरणा दी। शान्तिपाठ से कार्यक्रम समाप्त हुआ।

डी.ए.वी. ठाणे (महाराष्ट्र) के मेधावी छात्रों को हवन-यज्ञ पर मिला आशीर्वाद

डी.ए.वी. ठाणे का दसवीं कक्षा का परीक्षा-परिणाम अत्यन्त ही सुखद रहा। बच्चों के परिश्रम के लिए डी.ए.वी. ठाणे की प्राचार्य श्रीमती सिम्मी जुनेजा जी ने बच्चों को हार्दिक बधाई दी। साथ ही साथ इस सत्र में 10 CGPA पाने छात्रों को प्रशस्ति पत्र दिया गया।

इन सभी छात्रों एवं अभिभावकों ने सभी शिक्षक -शिक्षिकाओं के साथ मिलकर हवन किया और ईश्वर से उनके सुखद भविष्य के लिए प्रार्थना की। प्राचार्य जी ने जीवनरुपी हवन कुण्ड में हमेशा अच्छी आहुतियाँ देने की प्रार्थना की। देश और धर्म के लिए अपने कर्तव्यों को याद रखने को कहा।

प्राचार्य के अनुसार साल (2013-2014) के सत्र में विद्यार्थियों के लिए प्रति शनिवार हवन कर्म की अवधि निर्धारित की गई है।

हर मास के तीसरे शनिवार शिक्षक-शिक्षिकाएँ मिलकर हवन करते हैं और प्राचार्या उस मास में जन्मतिथिवाले शिक्षकवर्ग को वर्धापन देकर उनका मनोबल एवं प्रसन्नता को बढाती हैं।

दयानन्द कॉलेज, हिसार में व्यायाम शाला की आधार शिला

दयानन्द महाविद्यालय हिसार के छात्रावास प्रांगण में आज सुबह जिम्नेजियम हॉल के निर्माण के लिए आधारशिला रखी गई इस अवसर पर भूमि पूजन के अवसर पर हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। यह हवन यज्ञ डॉ. प्रमोद योगार्थी द्वारा सम्पन्न करवाया गया। इस बहुउद्देशीय हॉल में टेबल टेनिस कोर्ट, बैडमिन्टन कोर्ट, कुश्ती तथा बॉक्सिंग रिंग के अतिरिक्त जिम का भी प्रावधान किया गया है। इस अवसर पर शारीरिक शिक्षा विभाग के अध्यक्ष श्री जे.सी. नूनिया, प्राध्यापिका श्रीमती सुरजीत कौर, गर्वनिंग बॉडी के सदस्य अवनीश जेतली, डॉ. महेन्द्र सिंह, तथा गुरमेश चन्द्र के अतिरिक्त महाविद्यालय के कन्सट्रक्शन कमेटी के सदस्य सर्वश्री डॉ. आर.पी. सिंह, एम. एल. गर्ग, विवेक श्रीवास्तव, डॉ.के.के. शर्मा, रविन्द्र शर्मा, सुशील राजपाल के अतिरिक्त स्टाफ के सदस्य मौजूद थे।

इस बहुउद्देशीय हॉल के निर्माण के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक करोड़ पन्द्रह लाख रूपये की राशि अनुदान के रूप में महाविद्यालय को प्रदान की है। इस अवसर पर महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. राजेश कुमार तोमर ने कहा कि आजकल की भागदौड़ भरी दिनचर्या के कारण लोगों में तनाव बढ़ रहा है, इस तरह के जिम के निर्माण होने से स्टाफ के सदस्यों तथा विद्यार्थियों को बढ़ते तनाव को कम करने के का अवसर मिलेगा तथा इस हॉल के निर्माण के साथ महाविद्यालय के जो विद्यार्थी इधर-उधर जिमों में जाते हैं उन्हें यह सुविधा महाविद्यालय में ही उपलब्ध हो जाएगी।

मुद्रक व प्रकाशक - श्री प्रबोध महाजन, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित। स्वामित्व - आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक - श्री पूनम सूरी